गहरे पानी पैठ

• गुरुजनों के चरणों में बैठकर जो सुना
• इतिहास और धर्मग्रन्थों में जो पढ़ा
• और हिये की आंखों से जो देखा.

अयोध्याप्रसाद गोयलीय

स्नेहमयी भाभी,

स्वप्नमें भी किसीको पीड़ा नहीं पहुँचाई, फिर भी
आपदाओंके पहाड़ तुम पर टूट पड़े,
इसे भाग्यकी विशेष अनुकम्पा ही
समझना चाहिए; अन्यथा—

"किसको होती हैं अता इस शानकी बरबादियाँ"

ये दुःख हम सबकी जागीर हैं भाभी,

तुम्हें किस मुँहसे अपनी यह कृति भेंट करूँ—

"मेरे आँसू सही अनमोल मोती।
तुम्हारे हारके क़ाबिल कहाँ हैं"?

विषय-सूची

बड़े सबके आशीर्वाद

गहरे पानी पैठ

धर्म-ग्रन्थोंसे

इतिहाससे

हियेकी आँखोंसे

अत्याचार न हो जाये"—यह सब ऐसे चित्र हैं, जिन्हें पढ़कर दिल भर आता है और मानवताका इन मूक, गरीब, स्वाभिमानी प्रतिनिधियोंके प्रति मस्तक आदरसे झुक जाता है। गोयलीयजी इन सफल रेखाचित्रोंकी कलाकारिताके लिए बधाईके पात्र हैं। काश, वह ऐसे रेखाचित्र हिन्दी संसारको लगातार देते रहें—जीवनका प्रवाह अनन्त और पारावार असीम है। गोयलीयजी जैसे साधक ही डुबकी लगाकर नयेसे नये आबदार मोती निकाल सकते हैं। भारतीय ज्ञानपीठ लोकोदयकारी साहित्यकी अभिवृद्धिके लिए इस प्रकारके प्रकाशन प्राप्त करनेके लिए सदा प्रयत्नशील रहेगा।

डालमियानगर
७ अप्रैल १९५१

लक्ष्मीचन्द्र जैन,
सम्पादक
लोकोदय ग्रन्थमाला

बड़े जनोंके आशीर्वादसे

राणा प्रतापका भाट

जब वीर-केसरी राणा प्रताप जंगलों और पर्वत-कन्दराओंमें भटकते फिरते थे तब उनका एक भाट पेटकी ज्वालासे तंग आकर बादशाह अकबरके दरबारमें पहुँचा और सिरकी पगड़ी बगलमें दबाकर फर्शी सलाम झुका लाया। अकबरने भाटकी यह उद्दण्डता देखी तो तमतमा उठा और रोष-भरे स्वरमें बोला—

"पगड़ी उतारकर मुजरा देना, जानता है कितना बड़ा अपराध है?"

भाट अत्यन्त दीनता-पूर्वक बोला—"अन्नदाता! जानता तो सब कुछ हूँ, मगर क्या करूँ, मजबूर हूँ। यह पगड़ी हिन्दूकुल-भूषण राणा प्रतापकी दी हुई है। जब वे आपके सामने न झुके, तब उनकी दी हुई यह पगड़ी कैसे झुका सकता था? मेरा क्या है, मैं ठहरा पेटका कुत्ता, जहाँ भी पेट भरनेकी आशा देखी, वहीं मान-अपमानकी चिन्ता न करके पहुँच गया। मगर वहाँ-तनाह ... "

अकबरने सोचा—वह प्रताप कितना महान् है, जिसके भाट तक शत्रुके शरणागत होकर भी उसके स्वाभिमान और मर्यादाको अक्षुण्ण रखते हैं!

त्यागी

साहूकारकी माताने कहा—"बेटा ! तुम लाखों रुपयोंका लेन-देन करते हो, पर मैंने आजतक एक लाख रुपया एक स्थानपर रक्खा हुआ नहीं देखा। एक लाख रुपया चुनकर रखनेसे कितना लम्बा, चौड़ा, ऊँचा चबूतरा बनता है यह मैं उस चबूतरेपर बैठकर देखना चाहती हूँ।"

एक लाख रुपयेका चबूतरा बना और उसपर वे बैठीं। माता जिस रुपयेपर बैठी हैं वह तो दान करना ही चाहिए, यही सोचकर एक ब्राह्मणको बुलाया गया। दान देते हुए सेठको तनिक अभिमान हो गया। बोले—"पण्डितजी, दातार तो बहुत मिले होंगे, लेकिन ऐसा दातार न मिला होगा।"

पण्डितजी दान लेने अवश्य गये थे, परन्तु भिक्षुक मनोवृत्तिके नहीं थे। उनका स्वाभिमान जाग उठा और जेबसे एक रुपया निकालकर लाख रुपयेके चबूतरेपर डालकर बोले—

"तुम्हारे-जैसे दातार तो बहुत मिल जायँगे, पर मेरे-जैसे त्यागी विरले ही होंगे, जो एक लाखको ठोकर मारकर कुछ अपनी ओरसे मिलाकर चल देते हैं।

पर्देमें पाप

एक प्रेमी-प्रेमिका आजीवन ब्रह्मचर्य्यपूर्वक जीवन व्यतीत करनेकी अभिलाषा रखते थे। रोजाना एक साथ रहने, खाने-पीने, सोने-बैठने, हँसने-खेलने, पर क्या मजाल जो मनमें विकार आता। इसी तरह सानन्द निर्विकार प्रेममय जीवन व्यतीत हो रहा था कि एक रोज कामदेव के अन्धड़ने प्रेमीका चित्त चलायमान कर दिया। मनके किसी कोनेमें छुपा हुआ पाप मुँहपर आगया। प्रेमिकाने प्रेमीको भूल सुझाई, पर वह न माना। रतिगृहमें जानेसे पूर्व मकानके नीचे बहती हुई नदीपर स्नान करने गया तो देखा एक मनुष्य ढोल लिये दीवारके सहारे खड़ा है। पूछने पर ढोलवालेने बतलाया—

"आज प्रसिद्ध शीलवान प्रेमियोंके सत डिगेंगे इसलिये ढोल पीटनेको खड़ा हुआ हूँ।"

प्रेमीने स्नान किया और मकानमें आकर सदैवकी भाँति चुपचाप सो गया। सुबह उठकर देखा तो ढोलवाला चला जा रहा था। दर्याफ्त करनेपर कहा—

"अब सत नहीं डिगेगा इसीलिये जा रहा हूँ।"

तब प्रेमिकाने मुस्कराकर कहा—"देखा! सात पर्दोंमें सोचा हुआ पाप भी तालाबकी काईके समान जनताके मुँहपर आ जाता है।"

मूर्ख ईर्ष्यालु

एक मनुष्यकी पूजा-उपासनासे प्रसन्न होकर देवीने प्रकट होकर उसे एक शंख दिया और कहा—"जो तू चाहेगा वही इस शंखके बजानेपर मिलेगा और पड़ोसियोंको तुझसे दूना मिलेगा।" भक्त प्रसन्न होकर चला गया। उसने शंख बजाया और कहा कि मेरा एक आलीशान मकान बन जाय। शंख बजाते ही मकान तुरन्त बन गया, और पड़ोसियोंके यहाँ दो-दो महल बन गये। भक्तको यह बहुत बुरा लगा। भला ईर्ष्यालु मनुष्य दूसरोंको कब फूलते देख सकता है? उसने क्रुद्ध होकर शंखको एक कोनेमें डाल दिया। मगर कुछ अर्सेके बाद उसे रुपयोंकी बड़ी सख्त ज़रूरत हुई। लाचार होकर शंख बजाया। रुपये बरसे ही उसमें दूने रुपये पड़ोसियोंके घरोंमें आन पड़े। यह उससे बर्दाश्त न हुआ, और उसने फिर क्रुद्ध होकर कहा कि "मेरे घरके आगे चार-चार कुएँ खुद जाएँ।" शंख बजा और चार कुएँ उसके यहाँ और आठ-आठ पड़ोसियोंके घरके आगे खुद गये। फिर कहा "मेरी एक आँख फूट जाय।" शंख बजते ही उसकी एक, और पड़ोसियोंकी दोनों आँखें फूट गईं। और अन्धे होनेके कारण पड़ोसी बिचारे कुओंमें गिर पड़े। उन्हें कुओंमें गिरते देख ईर्ष्यालु मनुष्यको बड़ी प्रसन्नता हुई, हालाँकि एक आँख उसकी भी फूट गई थी।

फ़िक्र बुरी, फ़ाक़ा भला

बदपरहेज़

अफ़ीमचीकी होशियारी

देहातके एक अफीमची दिल्ली सैर करने आये और लक्ष्मीनारायण की धर्मशालामें ठहर गये। रातको भूखने जोर किया तो धर्मशालाके बाहरवाले हलवाईसे आठ आनेकी रबड़ी मलाई खाई। अफीमची ने रुपया दिया तो हलवाईके पास रेजगारी नहीं थी। लाचार बाकी अठन्नी अगले रोज ले जाना तय हुआ। अफीमचीने होशियारी यह की कि दुकानकी ठीक-ठीक पहचान करली ताकि दूसरे रोज पहचाननेमें भूल न हो। अगले रोज अफीमची एक मुसलमान दर्जीसे जाकर बोला—

"लाला! कल रातके आठ आने वापिस दिलाइये।"

"कैसे आठ आने?"

"कल रातको एक रुपया देकर आठ आनेकी रबड़ी ली थी। उस वक्त रेजगारी न होनेसे आपने आज ले जानेको कहा था। क्या रातकी अठन्नी इतनी जल्दी भूल गये?

दर्जी झल्लाकर बोला— अमाँ! अन्धे हो, यह दर्जीकी दुकान है या हलवाई की?"

"क्या खूब? अठन्नीके लिये ऐसा बदला-सो-बदला, मजहब भी बदल बैठे। भई यह मुसलमान भी कैसे चालाक होते हैं!"

लोगोंने झगड़ेका सबब पूछा तो अफीमची निहायत संजीदगीसे बोला—

'अरे साहब! मैं क्या दीवाना हूँ जो परदेशमें नाहक झगड़ा मोल लूँगा? रातको यह सांड जिस दुकानके आगे बैठा था, वहींसे रबड़ी ली थी देखलो गरीब अभीतक वहीं बैठा है।"

मौलवीकी दाढ़ी

मौलवी नसीरको मौलवीगीरी करते जब लम्बी छुट्टी लेकर घर जाना पड़ा तो अपनी एवज़में एक नये मुल्लाको छोड़ गये। ताकि वापिसी पर मौलवी मस्जिदका अधिकार बरकरार बना रहे। मगर नये मुल्ला एक ही काइयाँ थे। अपनी मीठी ज़बानसे लोगोंपर ऐसी मोहनी डाली कि हरदिलअज़ीज़ बन गये। मौलवी नसीर छुट्टीपर वापिस आये तो उन्होंने मौका नक्शा ही बदला हुआ पाया। गाँववाले उनकी गैरहाज़िरीमें पुरानोंके बजाय इनके गीत गाने लगे।

मौलवी नसीर भी पुराने घाघ थे। मौका-महल देखकर वे भी नये मुल्ला-की खामियोंमें छिद्र खोजने लगे। जुम्मेकी नमाज़को जोंही सब मुसलमान नमाज़ पढ़ने आये तो उनके सामने नये मुल्लाको मुखातिब करते हुए बोले—

'मौलाना! मैं तो आपका बड़ा मशकूर हूँ। गाँव-गाँवमें आपकी करामातोंकी धूम मची हुई है। जिसे भी आपने अपनी दाढ़ीका एक बाल दे दिया, निहाल हो गया। कंगाल, मालामाल हो गये। बे-औलादोंकी गोदें भर गईं। काने आँखवाले हो गये। बूढ़ोंको जवानी मिल गई। रोगी निरोग हो गये। गुज़ारिश है कि मुझे भी एक बाल अता फ़र्माइये ताकि बतौर तबर्रुक अपनी जानसे भी ज़्यादा अज़ीज़ रख सकूँ और मनकी मुरादें पूरी कर सकूँ।'

मुल्लाजीने तारीफ़ सुनी तो बाछें खिल गईं। आव देखा न ताव, झट एक बाल तोड़कर मौलवी नसीरकी खिदमतमें पेश किया। इतना देखना था कि गाँववाले भी इसरार करने लगे, मुल्लाजीको असमंजसमें पड़ा देख सब एकबारगी टूट पड़े। और इस ख्यालसे कहीं कोई महरूम न रह जाय, इसी आपाधापीमें मुल्लाजीकी दाढ़ी ठूँठ हो गई।

दाढ़ीविहीन मुल्लाजी बोरिया-बिस्तरा बाँधकर गाँवसे निकल गये और मौलवी नसीरकी उस्तादीका लोहा मानने लगे।

मुशायरेमें परिहास

शिमलेमें एक आलीशान मुशायरा हो रहा था। पंजाबके प्रीमियर सर सिकन्दर हयातख़ाँ मुशायरेके सभापति थे? खिलाफ़त आन्दोलनके मशहूर नेता मुहम्मद अली मर चुके थे। और उनके छोटे भाई शौक़त अली उसमें शिरकत फ़र्माते थे। जब आपके ग़ज़ल पढ़नेका नम्बर आया तो ग़ज़ल पढ़नेसे पूर्व आपने श्रोताओंसे कहा—"हज़रात! मेरे वालिद मुहतरिम भी शायर थे और 'गौहर' तख़ल्लुस फ़र्माते थे। मेरे बड़े भाई मुहम्मदअली भी शायर थे और 'जौहर' तख़ल्लुस रखते थे और मैं भी शायरी करता हूँ। और ..."

बीचमें ही एक श्रोता बोला—'शौहर'। गौहर, जौहरके तुकमें शौहरका मज़ाहिया तख़ल्लुस ईजाद करनेपर जनतामें हँसीके फव्वारे छूट पड़े। ख़ुद मौलाना भी इस फब्तीसे काफ़ी देरतक हँसते रहे। और फब्ती कसनेवालेकी काफ़ी तारीफ़ की।

शौकतअली भाईके मरनेके बाद बुढ़ापेमें एक अमरीकन लेडीसे शादी करके ताज़े-ताज़े शौहर बने थे। गौहर, जौहरके तुकके साथ शौहर-में यह व्यंग भी निहित था।

— —

रातको ये हज़रत हलवाईकी दूकानसे खाँसीकी दवा खानेके बहाने तनिक-सी मलाई माँग लाये और सेठजीकी मूँछोंपर लगा दी। प्रातः सेठजी उठे और ओठोंपर जो जीभ लगी तो मलाईका स्वाद पाकर बाग़-बाग़ हो गये। बोले—"बड़े भाग्यसे यह ईमानदार नौकर मिला है। देखो तो सही, दूध कैसा मलाईदार पिलाया कि मलाई अभीतक मूँछोंपर लगी हुई है।"

—

हुनरकी कमी

एक गाँवमें एक बुड्ढा रंगरेज रहता था। उसे काला, पीला, हरा और लाल ये चार ही रंग रँगने आते थे। गाँवकी बहू-बेटियाँ कभी धानी, प्याज़ी, ज़िमिमिगी, सुर्मई, ऊदी, मोरकण्ठी वगैरह रँगनेको ज़िद करतीं, तो बुड्ढा कहता, मेरी बेटीके गोरे बदनपर खिलेंगे तो काले, पीले, हरे और लाल रंग ही। बाकी यूँ कहो जौन-सा रंग दूगा। बहू-बेटियाँ नित नये रंगको फर्माइश करतीं, मगर रँगकर आते वही रंग जो बुड्ढा रँगना जानता था।

———

घरमें एक टिमटिमाता दीपक बचा था, सो आज उसे भी क्रूरकालकी आंधीने बुझा दिया। फिर भी धैर्य रखनेको कहते हो ! बाबा, धैर्य मेरे पास अब है ही कहाँ जो उसे रखूं ? उसे तो कालने पहले ही छीन लिया। मुझे अब बुढ़ापेमें रोनेके सिवाय और काम भी क्या रह गया है, स्वामिन् !"

सहनशक्तिसे अधिक आपत्ति आनेपर आस्तिक भी नास्तिक बन जाते हैं। जो पर्वत सीना ताने हुए करारी बून्दोंके वार हँसते हुए सहते हैं, वे भी आग पड़नेपर पिघल उठते हैं—ज्वालामुखीसे सिहर उठते हैं। नारदको भय हुआ कि वृद्ध नास्तिक न हो जाय। अतः बोले—

"तो क्या तुम अपने पौत्रकी मृत्युसे सचमुच दुखी हो ? वह तुम्हें पुनः दिखाई दे जाय तो क्या सुखी हो सकोगे ?"

वृद्धने निर्निमेष नेत्रोंसे नारदकी ओर देखकर अपने हृदयकी वेदना को आँखोंमें व्यक्त करके अपनी अभिलाषाको मौन भाषामें प्रकट कर दिया।

नारदकी मायासे क्षितिजपर पौत्र दिखाई दिया तो वृद्ध विह्वल होकर लपका।

"अरे मेरे लाल, तू कहाँ चला गया था ?"

"अरे दुष्ट, तू मेरे शरीरको छूकर अपवित्र न कर। पूर्व जन्ममें तूने और तेरे आठ पुत्रोंने जिन लोगोंको यन्त्रणाएँ पहुँचाई थीं, ऐश्वर्य और अधिकारके मदमें जिन्हें तूने मिट्टीमें मिला दिया था, वे ही निरीह प्राणी तेरे पुत्र और पौत्र रूपमें जन्मे थे। ये रुदन करती हुई तेरी आठों पुत्र-वधुएँ तेरे पूर्व जन्मके पुत्र हैं, जिन्होंने न जाने कितनी विधवाओंका सतीत्व हरण किया था।'

स्वर्गीय आत्मा विलीन हो गई। वृद्धके चेहरेपर स्याही-सी पुत गई। नारदबाबा वीणापर गुनगुनाते चले गये—

"अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।"

बुढ़िया पुराण

"मैं कितनी बार भौंक चुकी हूं, मगर आप हैं कि कानपर जूं तक नहीं रेंगती।"

"आखिर माजरा क्या है? अभीतक तो अच्छी खासी चहकती-फुदकती घूम रही थी, यह यकायक भौंकनेपर उतारू क्यों हो गई।"

"भौंकूं न तो क्या करूं? बारहा कहा कि एक बिल्ली पकड़वाकर मँगवा दीजिये, मगर आपकी सुनें तब ना! मैं कहती हूं बिल्ली अगर न आई तो दुल्हनको डोलेसे नहीं उतारूंगी। फिर न कहना कि मुझे जताया तक भी नहीं और सबके सामने आबरू खराब कर दी।"

"अगर तुम इसी तरह भौंकती रहीं तो बिल्ली यहाँ ठहरेगी भी क्यों कर? विवाह-शादीके मौकोंपर लोग-बाग बिल्लीको घरसे भगा देते हैं और तुम हो कि उसे मँगानेपर बजिद हो। आखिर बात क्या है?"

"बात क्या होती? कई बार कहा कि औरतोंके काममें दस्तन्दाजी न किया कीजिये मगर आप हैं कि बाज नहीं आते! मैं ही क्या अनोखी मँगवा रही हूं। हमारे खान्दानमें यह रस्म हमेशासे होती चली आ रही है। क्या भूल गये! जब मैं डोलेसे उतरी थी, तो मेरा मुंह दही-बूरा खिलानेके लिए सासूजीने नादके नीचेसे दही देनेका आदेश किया था। और जब आपने नाद उठाई तो दहीके बदले वहाँ मरी हुई बिल्ली पड़ी थी।"

"वाह क्या कहने हैं तुम्हारी इस दास्तानके? हम तो कायल हो गए तुम्हारे इस बुढ़िया पुराणके। बात तो दरअसल यह थी कि बिल्ली नादके नीचे दही चाटनेको गई और उसके धक्केसे नाद उसीके ऊपर गिर पड़ी। मांकी शादीके जोड़-तोड़में देखनेका अवसर न मिला और बिल्ली वहीं दबकर मर गई। अब तुम हो कि उस लकीरकी फकीर बनी हुई हो।"

ठग

एक ठगने किसी हलवाईको ५०० लड्डू बनवानेका आर्डर देकर दूसरे दुकानदारसे २५० रु० का सौदा खरीद लिया। सौदा ले चुकनेपर वह बोला—"मेरे साथ आप किसी आदमीको कर दीजिये, ताकि अपने आढ़तीसे रुपये दिलवा दूँ।" दुकानदारने सहजस्वभाव अपना आदमी उसके साथ कर दिया। ठग उस आदमीको हलवाईकी दुकानपर ले जाकर बोला—"२५० इनको गिनकर दे दीजिये और २५० मैं खुद ले जाऊँगा।"

हलवाईके 'बहुत अच्छा' कहनेपर ठग तो चलता बना। जब हलवाई २५० लड्डू थालमें लगाकर दुकानदारके आदमीको देने लगा तो वह आदमी भी चकरा गया। गरज बहुत कुछ लड़ने-झगड़नेपर समझमें आया कि उस ठगने दोनों ही दुकानदारोंको बेवकूफ बनाया।

घरका भेदी

कुल्हाड़ियोंसे भरी हुई गाड़ीको आते देख जंगलके दरख्त रोने लगे! एक बूढ़े दरख्तने रोनेका कारण पूछा तो दरख्तोंने उस गाड़ीकी ओर इशारा करते हुए कहा—

"इसमें भरी हुई कुल्हाड़ियाँ हमें काटकर नष्ट कर देंगी।"

बूढ़ा दरख्त मुस्कराता हुआ बोला—"डरो नहीं, इनके साथ बेंटोंके हैंडिलमें जब तक हमारा भाई लगा न होगा, यह हमें तिलमात्र भी कष्ट नहीं पहुँचा सकतीं। यदि रावणका भाई विभीषण रामके साथ, प्रताप-का भाई शक्तसिंह अकबरके साथ और पृथ्वीराजका भाई जयचन्द शहाबुद्दीन गोरीके साथ न होता तो उन्हें पराजय देनेकी सामर्थ्य किसमें थी?"

रोगी डाक्टर

एक मनुष्यको नेत्रोंका ऐसा रोग था कि उसे प्रत्येक वस्तु दो[illegible] दिखाई देती थी। मजेदार बात कि जिस डाक्टरके पास वह इला[illegible] को पहुँचा, उसे हर चीज बार-बार दिखाई देती थी। डाक्टरने सुनकर [illegible] कर आनेका सबब पूछा तो रोगीने कहा—"हुजूर हमको हर चीज दो[illegible] दो दिखाई देती है।"

डाक्टरने धीरज बँधाते हुए कहा—"कोई चिन्ताकी बात नहीं इलाज [illegible] हो जायगा। क्या तुम चारोंको यही रोग है?"

रोगी अस्त व्यस्त होकर सकपका गया। वह माथेपर हाथ मारकर बोला—'धन्य भाग! मेरी चिन्ता छोड़कर पहले आप अपना इलाज करायें।'

पाँचवाँ सवार

देहलीसे चार घुड़सवार लाहौरको जा रहे थे कि लाहौरके नजदीक पहुँचनेपर एक गधेवाला भी साथ हो लिया। लाहौर पहुँचनेपर [illegible] लोगोंने पूछा—

"कहो सवारो आप लोग कहाँसे चले आ रहे हैं?"

घुड़सवार मुँह खोलने भी न पाये कि गधेवालेने आगे बढ़कर कहा—"हम पाँचों सवार देहलीसे आ रहे हैं।"

गधेवालेकी बात सुनकर [illegible] कि वह भी अपनेको सवारोंमें समझता [illegible]

[illegible]

मरते-मरते भी कुटिलता

छिद्दा बाभन जब मरने लगा तो अपने लड़कोंको बुलाकर बोला—

"तुम लोगोंने मेरा आजतक कभी कोई कहा नहीं माना। आज मैं परलोक जा रहा हूँ। मेरी चिताको आग देनेका उसी लड़केको अधिकार होगा जो मेरी अन्तिम अभिलाषा पूरी करेगा। जो प्रतिज्ञा नहीं करेगा वह मेरी अर्थीको हाथ भी नहीं लगा सकेगा?"

छिद्दा बाभनके गुणों और स्वभावसे जो लड़के परिचित थे, वे तो चुप रहे। परन्तु एक परदेशमें रहनेवाला पुत्र झाँसेमें आकर जवानीके जोशमें अभिलाषा-पूर्ति करनेकी प्रतिज्ञा कर बैठा। छिद्दाने उसके कानमें कहा "मेरे मरनेपर मेरी लाशके टुकड़े करके पड़ोसियोंके घरोंमें डालकर पुलिसमें रपट लिखा देना कि इन लोगोंने जीतेजी तो मेरे पिताको कष्ट दिये ही, मरनेपर भी शरीरके अंग-अंग काटकर ले गये। मुझे शरीरके छिन्न-भिन्न होनेसे कतई कष्ट न होगा, वरन् पड़ोसियोंकी जो फ़जीहत होगी, उसकी कल्पना मात्रसे मेरा रोम-रोम पुलकित हो रहा है।

सन्तोषी

नव वर्षकी खुशीमें समस्त क्लर्कोंको वेतन बढ़ाए जानेकी बात कहकर और उनसे बदलेमें खूब धन्यवाद प्राप्त करके साहबने यह मंगल-सूचना जब एक साधारण कर्मचारीको दी, तब वह अत्यन्त नम्र और वीतराग भावसे बोला—

"श्रीमान्‌की मुझपर अत्यन्त कृपा है, पर वेतन न बढ़ाएँ तो बड़ी दया होगी। वेतन बढ़ते ही खर्च भी बढ़ जायगा। जैसे-तैसे निराकुलता-पूर्वक जो जीवन व्यतीत हो रहा है उसमें एक भूचाल आ जायगा।"

धन्यवादका इच्छुक आफ़िसर जो हज़ारों रुपया पानेपर भी तृष्णाकी वैतरणी नदीमें बहा जा रहा था तिनकेका सहारा पाकर सजग हो उठा।

फिर मुझे तो ख़ुदा समझिये

वेश्याओंके साजिन्दे अक्सर मुसलमान होते हैं और ये मीरासी कहलाते हैं। पुश्तदरपुश्त यही पेशा करते रहनेसे इनकी मीरासी एक जात ही बन गई है। यह कौम मुसलमानोंमें भी नीच समझी जाती है। पंजाबमें इनसे सम्बन्धित अनेक लतीफे मशहूर हैं।

एक दफेकी बात है कि कचहरीमें एक मीरासी गवाही देनेके लिए पेश हुआ। अपना और बापका नाम बता चुकनेके बाद जब न्यायाधीशने उससे कौम पूछी तो, यह सोचकर कि 'यहां मुझे कौन जानता है, मीरासी बताकर कौन अपनेको ज़लील करे—" बड़े ठाटसे अपनी कौमियत 'शेख' बता दी। संयोगसे वहाँ कोई शेख भी मौजूद था। और उसे भी गवाही देनी थी। मीरासीके बाद तुरन्त ही उसकी बारी आ गई। जब उससे कौम पूछी गई तो जलकर बोला—"अगर यह कमीन 'मीरासी' अपनेको शेख समझता है तो फिर मुझे तो ख़ुदा समझिये।"

टिकिट बाबूका फूफा

रामू और छोटू जाट रोहतकसे दिल्ली जानेको स्टेशनपर पहुँचे तो छोटूने अपने टिकिटके दाम भी रामूको दे दिये। रामूने पहले अपना टिकिट खरीदा। दोनो टिकिट एक साथ इसलिये नहीं खरीदे कि शायद टिकिटके भावमें कुछ कमती बढ़ती हो जाय, सम्भव है दूसरा टिकिट ही न हो और हिसाबके झंझटमें कौन फँसे?

जब रामू अपना टिकिट ले चुका तो बाबूसे बोला एक टिकिट छोटूका भी दे दे। बाबू हैरान कि यह छोटू स्टेशन कौन-सा हुआ। जब ख्यालमें नहीं आया तो पूछा—"यह छोटू कहाँ है?"

रामू छोटूकी तरफ इशारा करते हुए बोला—"यह खड़ा तेरा फूफा।"

उल्लुओंकी नसीहत

मानसरोवरसे एक हंस और हंसनी उड़कर आकाशकी सैरको निकले तो मार्ग भूल गये। इधर-उधर भटकते हुए वे एक ऐसे प्रदेशमें जा निकले जहाँ मनुष्य नहीं, मनुष्याभास रहते थे। सारा प्रदेश उजाड़ और भयावह बना हुआ था। न वहाँ कोई शीतल सरोवर था, न हरा-भरा वृक्ष। लाचार थके-मांदे हंस हंसनीने शुष्क वृक्षपर ही बसेरा लिया। उसी ठूँठपर कुछ उल्लू भी बैठे हुए थे। उन्हींकी ओर संकेत करके हंस बोला—"प्रिये! अब मुझे इस प्रदेशके उजाड़ होनेका कारण मालूम हुआ। यह प्रदेश इन उल्लुओंकी कृपासे ही इस दशाको पहुँचा है। जहाँ उल्लू रहते हैं, वह देश वीरान हो जाता है।"

पतिकी बात सुनकर हंसीनेने सम्मतिसूचक सिर हिलाया और उल्लुओं की ओर तनिक भ्रू-निक्षेप करके मुस्करा दी।

उल्लुओंने यह सब सुना और वे चुपचाप दिल थामकर रह गये। सुबह होनेपर युगल जोड़ी उड़नेको उद्यत हुई तो उल्लुओंने हंसनीको पकड़ लिया, और हंससे बोले—"इसे कहाँ लिये जाता है, यह तो हमारी पत्नी है।"

हंसनी चीख मारकर रह गयी, हंसने अपना सिर पीट लिया।

उल्लू बोले—"रोने-धोनेमें कोई लाभ नहीं। इस प्रदेशके मनुष्योंकी पचायत बुलायें लेते हैं; उसीका निर्णय हम सबको मान्य होगा।"

अपनी ही वस्तुके स्वामित्वका निर्णय दूसरोंसे कराया जाय, हंस यह सुनकर सिहर उठा। फिर भी मरता क्या न करता, चुपचाप स्वीकृति दे दी।

उस ठूंठ वृक्षके नीचे प्रदेश भरके मतान्य कहे जानेवाले पचायतमें शरीक हुए। यह प्रश्न गम्भीर था। हंसनी हंसकी बताई जाय या उल्लुओं को? यह ऐसी पचायत नहीं थी जो सत्यासत्य न समझती था। पचायत बहुत पृथ्वीकी आग गई हुई [illegible]। [illegible]

होते हैं और उनका नाश [illegible]

निर्णय देते हैं तो धर्म आडे आता है। इतनेमें एक वृद्ध बोले—"भाइयो! प्रश्न कितना गम्भीर और जटिल है यह आप जानते हैं, फिर भी यदि इसके निर्णयका अधिकार मुझको दें तो मैं क्षणभरमें इस समस्याको सुलझा सकता हूँ।"

सब एक स्वरसे बोले—"बेशक चौधरी! आप ही हमारे सिरमौर हैं, जो कहोगे वही इस पंचायतका फैसला समझा जायगा।"

तब चौधरी बोले—"देखो भाइयो! अगर हंसनी हंसकी कहता हूँ तो यह परदेशी लेकर उड़ जायगा, हमारा इससे कुछ भी लाभ न होगा। और उल्लुओंकी कहता हूँ तो हंसनी फिर यहीं रहेगी। इससे जो बाल-बच्चे होंगे वे हम ही होंगे। इस तरह यह प्रदेश जो उल्लुओंका कहलाता है धीरे-धीरे हंसोंका कहलाने लगेगा।"

हंसनी उल्लुओंकी सर्व-सम्मतिसे निश्चित हो गई। हंस व्याकुल प्राण लेकर उड़ने लगा तो उल्लुओंने उसे भी पकड़ लिया और बोले—"मूर्ख! तू जो कहता था कि यह प्रदेश इन उल्लुओंने उजाड़ किया है, सो अब बता यह प्रदेश हम उल्लुओंने वीरान किया है या इन जानके ठेकेदार स्वार्थी मनुष्योंने?"

हंसने अपनी भूल स्वीकार की, तब हंसनी उसे लौटाते हुए उल्लू बोले—"याद रख! उल्लुओंसे देशको इतनी हानि नहीं पहुँचती, जितनी कि स्वार्थी समझदारोंसे पहुँचती है। इन स्वार्थियोंके प्रत्येक श्वासमें ऐसे कीटाणु होते हैं जो सोनेके संसारको नरक बना देते हैं। संसारमें ऐसा कोई बीभत्स पाप नहीं जो स्वार्थी न कर सकें! संसारमें पापका उद्गम ही स्वार्थ है।"

उल्लुओंकी सत्सीहत हंस-हंसनीने नतमस्तक होकर सुनी और भूलके लिये क्षमा माँगकर मानसरोवरको चले गये।

तरह परिवर्त्तन हो जानेसे आश्चर्य हो ही रहा था कि दूसरे गीदड़ोंके रोने की आवाज सुनकर संस्कारके वशीभूत स्यारनाथ भी मुँह ऊँचा करके हू-हू पुकारने लगे। मुँह खोलते ही सारा भेद खुल गया। नाहरखाँने जो तमाँचा मारा तो स्यारनाथके प्राण-पखेरू उड़ गये।

नंगा क्या पहने, क्या रक्खे ?

एक देहाती दिल्ली आया तो फतहपुरीपर दूकानों दुकानोंको निहारने लगा। दुकानदारने गाहक समझकर उसे अन्दर ले जाकर सभी किस्मके सन्दूक दिखाये और भाव बताये। दुकानमें चारों तरफ फिरकर जाट जब जाने लगा तो दुकानदारने टोका—

"चौधरी ! सन्दूक नहीं लेगा ?"

"के करेंगा ?"

"लत्ते रखना।"

"लत्ते इसमें रखूंगा तो फिर पहनूंगा तेरी ऐसी-तैसी ?"

दाएँ-बाएँ बैठे हुए दो श्रोता तो इतने निमग्न हुए कि उनका शरीर ही शरीर यहाँ श्रवण करनेको रह गया और प्राण सुख-स्वप्न देखने लगे। उन दोनोंमें एक कपड़ेका और दूसरा अनाजका व्यापारी था। कपड़ेके व्यापारीने स्वप्नमें देखा कि दुकानपर ग्राहक खड़ा हुआ लट्ठा देख रहा है। भाव पूछनेपर बजाजने दस आने गज बतलाया, पर ग्राहक छः आने गज माँगने लगा। आखिर बहुत ही हुज्जतके बाद कपड़ेका व्यापारी बोला—

"अच्छा न तेरे छः आने और न मेरे दस आने। बस आठ आनेमें फैसला हुआ," यह कहते हुए लट्ठेको फाड़नेके लिए कपड़ेके व्यापारी श्रोताने ज्यों हाथ बढ़ाया तो पाण्डेजीकी पोथा-पाथीके पन्ने हाथमें आगये और वे बीचमेंसे चट दो कर दिये गये।

कपड़ेके व्यापारी इधर लट्ठा समझकर पाण्डेजीके पोथी-पत्रा फाड़ रहे थे, उधर उसी समय अनाजके व्यापारीने स्वप्नमें बिजारको अपनी दुकानका अनाज खाते देखा तो वह डण्डा उठाकर पाण्डेजीपर बिजारके भ्रममें दनादन बरसाने लगा और शोर मचाने लगा—"क्या तेरे लिए ही यह अनाजकी ढेरी लगाई थी।'

पण्डित [illegible] [illegible] अपनी और पोथी पत्रेकी यह दुर्गति देखी तो [illegible] [illegible] [illegible] और फिर उनकी अपनी भूल जो कभी [illegible] [illegible] [illegible] हुआ करता [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] किया था।

लालची साधु

जब जाने लगा तो छज्जू जाटने पाँवोंकी रज अपने मस्तकपर लगाते हुए कहा—"तो महाराज, अब कब दर्शन दीजियेगा ।"

लालची साधु नीची नजर किये हुए बोला—"जब १०० रु० इकट्ठे हो जायेंगे ।"

बच्चे पीछेसे तालियाँ बजाकर चिल्लाये—

लोभ पापका बाप बखाना ।

हम जानें, मजिये गाना हम जानें, गरज़ हरफ़नमें उस्ताद हैं, फिर भी कहती है—क्या उम्र भर चोंच बने रहोगे? अरे हमने तो वो-वो सूरतें की हैं कि परिन्दे भी आकर अश [illegible]।"

बी अल्लारक्खी हँसीको ज़ब्त करते हुए बोली—"बेशक, मुझसे गलती हुई। आखिर मैं भी तो सुनूँ आज कौन साहब तशरीफ़ लाये हैं, जिनके लिये ..."

मियाँ जुम्मन बीचमें ही बात काटकर बोले—"अरे, क्या तू आज भी ऐसा-वैसा मेहमान आया हुआ समझती है? आज मेरे उस्ताद आये हैं, उस्ताद! इन्हींकी बदौलत तीतरबाजी, पतंगबाजीका इल्म हासिल हुआ है। खुदा-कसम, अपने फनमें यकता हैं। बिलान, इन्दौर, बम्बई, हिन्दुस्तान लाहौर, पंजाब, कलकत्ता, बंगाल, दूर-दूरमें मशहूर हैं। इनकी दुनियाकी कोई ख़िदमत तो करले।"

बी अल्लारक्खी जुम्मनकी इन शेखचिल्ली जैसी बातोंसे रही सही और भी जल भुन गई। तनककर बोली—"तभी तो मामजी कहा करती थीं मर्द जातके तीन यार धोबी, तेली और मनिहार"। पतंगबाज, तीतर-बाज ही उस्ताद हुए या कभी किसी गुणीके पास भी बैठे?"

जुम्मन काठ और पत्थरकी तरह निखट्टू तो था ही नहीं, जो चुपचाप खड़ा-खड़ा सुना करता? आज ही तो उसने कमाते हुए पाँच रुपये बी अल्लारक्खीको नज़र किये थे, फिर क्यों किसीकी खरी-खोटी सुनता। वह [illegible] कर बोला—

"[illegible] निरालती है मेरी तहज़ीब, या जमाई गुणियोंके साथ?"

बी अल्लारक्खी जिनकी आवभगतमें अभी आँखें बिछा रही थीं [illegible] मगर न मालूम उसे क्या सूझ गई। [illegible] हुई बोली— [illegible] सुन [illegible] ऐसी हँसीमें उड़ा दिया [illegible] उसकी [illegible] उन्हें [illegible] [illegible] है।

गई। अच्छे मियाँ, कोई आमेद-वामेदवा तो परवाना नहीं है। ज़रा देखना, मैं तुम्हारे पाँवों पड़ती हूँ।"

इतना कहकर बी अल्लारक्खी तो परदेके पासमे खिसक आईं। उधर उस्तादजीके पेटमें चूहे कबड्डी खेलने लगे। अजीब दुविधामें जान थी। 'रहें या चलते बनें? चलते क्यों बनें? आखिर अपना शागिर्द है, क्या मुझीसे यह शरारत करेगा? कर भी दे तो क्या ताज्जुब? याजना कुत्ता कब अपना-पराया देखता है. उमकी ज़रा-सी बात होगी और यहाँ उम्र भरको नकटे-बूचे हो जाएँगे। मान मुकरानकी भाड़ और हुक्केका पानी ऐसी मेहमाननवाज़ीपर।

इसी तरह न मालूम क्या-क्या ऊँच-नीच सोचते हुए खूँटेसे बँधी अपनी टट्टवानी खोलकर चलते बने। जुम्मन नाई सामने मढ़े हुए हुक्केको लखनवी तम्बाकूसे मुअत्तर करके लाया तो उस्तादजीको न पाकर बीवीसे पूछा—"उस्ताद कहाँ गये?"

बी अल्लारक्खी मुँह बिचकाकर बोली—"ऐ वाह, अच्छे उस्तादजीको लाये शर्म न लिहाज, निगोड़ा कहते भी न लजाया।"

जुम्मन घबराकर बोला—"ऐं! आखिर क्या हुआ?"

बी अल्लारक्खीने मटककर कहा—"होना क्या? नासपीटा बोला, ज़रा पेटीमेंसे उस्तरा निकाल दो। मैंने हाथके इशारेसे मना कर दिया। बस इतनी-सी बातपर मुझे और तुम्हें गालियाँ बकता हुआ टट्टवानीपर तड़कर चलता बना।"

जुम्मन दाँत किचकिचाकर बोला—"अरे तो बेवकूफकी बच्ची! इसमें शर्म और लिहाजकी क्या बात थी? दे क्यों नहीं दिया? एक उस्तरा क्या, उनके ऊपर सैकड़ों उस्तरे निछावर कर दूँ।"

इतना कहकर जुम्मन पेटीमेंसे उस्तरा निकालकर और उसे खोलकर उस्तादजीको मनानेके लिए दौड़ा। उस्तादजीने मुड़कर देखा कि जुम्मन उस्तरा लिए हुए आ रहा है तो उसे बी अल्लारक्खीकी बातपर पूरा यकीन

हुए बोला—"देखिए, इसमें क्या शक है? वहाँ तो कहते हैं, आप-जैसे जहीन इन्सानका मरने की दिमाग खरीदकर अजायब घरमें रख देते हैं।'

गपोड़मल इन मीठे मजाकको न समझकर मारे आत्म-गौरवके शेखीमें आकर बोले—प्यारो, कलकी बात तो सुनो—

हम अपने मुश्की घोड़ेपर चढ़कर वन निकलने गये, तो आँधीने वह ज़ोर पकड़ा कि हाथको हाथ दिखाई न देता था। हमने जो ज्योंही घोड़ेको हंटर लगा दिया, तो वह गायब हो गया। लगा हिरनकी तरह चौकड़ियाँ भरने। हम लाख उसके रोकनेकी कोशिश करते थे, मगर वह किसकी सुनता था?

बहलवानराय—तो हुजूर आपने भी तो ग़ज़ब कर दिया। मुश्कीको हंटरकी बर्दाश्त कहाँ? वह तो कुल्फलाकीन गाजर और शर्बतेशबनम पीकर इतना बड़ा हुआ है। उसने जो लाड़-प्यारकी ज़िन्दगी बसर की है वह किसी नवाबको नसीब नहीं। बड़े हुजूरके वक्तमें हुजूरकी दादी साहबा उसे अपने मैकेसे लाई थीं। कुत्ते-जैसे कदमें माशाअल्लाह वह इसी घरमें इतना बड़ा हुआ है।

चिरागअली—मुश्की घोड़ेके क्या कहने! दुम-दुममें अपना सानी नहीं रखता। नाजुक मिज़ाज इतना कि खुदाकी पनाह! उस रोज़ घासका गट्ठर लिए हुए हज़रत मोरीमें गिर पड़े, तो दो रोज़ तक उठनेका नाम नहीं लिया। वह तो कहिये ख़ैरियत हुई, जो मनाने-पुचकारनेसे उठ आये, वरना ग़ज़ब ही हो जाता।

गुलशेर—अजी, मुश्की घोड़ेकी हर एक चीज़ लाजवाब, उसकी सारी आदतोंमें ख़ासियत! उसकी हिनहिनाहट कोयलकी बोलती बन्द करे, रूप उसका कबूतरोंको भी शरमाए, उसकी पसलीकी उभरी हुई हड्डियाँ चमेलीकी कलियोंको दूर बिठावें, अन्दरको धुसी हुई छोटी और गोल आँखें कबूतरको भी नीचा दिखावें और उसकी सिरानी-सिरानी कान,

लखनऊके नवाब, वाजिदअलीशाहमें भी शोखी भरी ! परमात्मा भूठ न बुलायें, हुजूरके मुश्की घोड़ेको हिमं काबुली गधा तो करले ?

घनश्यामराय—(बीच ही में बात काटकर)—यार, हो तुम निरे घोंचू ही । श्यामकल्याण गाते-गाते यह भैरवीकी तान क्यों छेड़ दी ? मुश्की घोड़ेसे और काबुली गधेसे क्या निस्बत ? सच कहते हैं मजलिसे-इल्ममें ऐरे-गैरोंको नहीं बैठने देना चाहिए ।

गणेशदास—भाई, इसपर क्यों खफ़ा होते हो । यह भी किसी हद तक ठीक ही कहना है । पहले काबुली गधे शाह ईरानकी सवारीमें रहते थे ।

गणेशदासका इतना कहना था कि चारों तरफसे ख़ूब ! ख़ूबकी बौछारें होने लगीं । वाह ! कैसा मीठा फिकरा है ? गुलामके हुज़ूरको वफादारीमें शामिल करना, इसे कहते हैं—गरीबपरवरी ! किसी शायरने ख़ूब फ़रमाया है—

"जो बात की खुदाकी क़सम लाजवाब की ।"

"हाँ, तो हुजूर ! फिर क्या हुआ ?"

गणेशदासको पलभर पहलेकी बात याद नहीं रहती । वह इस चक्करमें पड़े कि अब मैं क्या कहूँ, न मालूम क्या कह रहा था । इस बातको गुलमोहर ताड़ गये । उन्हें ख़ुद नहीं मालूम कि कौन क्या बक रहा है, जल्दीमें बोल उठे—"जी फिर उस बगलका क्या हुआ ?"

विलायतअली—यार, तुम भी हो निरे गुग्घू । बगुल आदमी भी कोई आदमी है । फिर भला उसका यहाँ गुनियोंकी महफ़िलमें ज़िक्र ही क्या ?

गणेशदास—क्योंजी मियाँ गुलमोहर, तुम्हें इन्होंने ख़ुशबू निशा सुगान (...) भी क्यों कहा ?

गुलमोहर—हुजूर, मेरी पैदाइश, सूरत शहरकी है इसलिये मुझे यह लोग इस प्यारे नामसे पुकारते हैं ।

क्या सुलभा हुआ निशाना है। एक ही गोलीमें पाँव और कान ज़ख्मी कर दिये। इसे कहते हैं शिकारका शौक़। जीवका जीव न मरा और शौक़का शौक़ पूरा हो गया। अल्लाह जानता है, हुज़ूरके वो सधे हुए हाथ हैं कि चूमनेको जी चाहता है।"

चिरागअली—सधे हुए हाथोंके क्या कहने? चाहें तो बन्दूककी गोलीसे नोरेमिश्रगा (पलकके बालकी नोक) उड़ा दें, और आँखको मालूम तक न हो।

बेगम शिकारकी आड़में सब कुछ सुन रही थी। अब उससे अधिक बर्दाश्त न हो सका, वह मारे गुस्सेके लोटन कबूतर हो रही थी, कड़ककर बोली—"वाह रे खुशामदी टट्टुओ, क्या हाँ-में-हाँ मिलाई है।"

बेगमकी आवाज़ सुनी तो नवाबसाहबकी नानी मर गई। भीगी बिल्लीकी तरह इधर-उधर देखने लगे। खुशामदी लोग भी इधर-उधर खिसकनेको हुए कि उनमेंसे चिरागअली बोला—"समझमें नहीं आता, हुज़ूरने ऐसी कौन-सी झूठ बात कही है, जो बेगमसाहबाके दुश्मनोंको इतना सदमा पहुँचा है।"

बेगम डाँटकर बोली—"झूठ नहीं तो क्या सच है? पीपलके पेड़को घोड़ा फलाँग गया, एक ही गोलीमें हिरनका पाँव और कान ज़ख्मी कर दिये। कहाँ पाँव कहाँ कान! निगोड़ी झूठ बोलनेमें भी अक़्लकी ज़रूरत है।"

चिरागअली—"बस, इतनी ज़रा-सी बातपर हुज़ूरको झूठा समझ लिया। उस रोज़ तो मैं भी हुज़ूरके हमराह सायेकी तरह साथ था। वाक़या तो हुज़ूरने सच-सच ही बयान किया है। जैसा कि हुज़ूरने फरमाया कि आँधी उस रोज़ बड़े ज़ोरसे आई, बस उस आँधीमें एक पीपलका दरख्त रास्तेमें गिर पड़ा और घोड़ा उसे आसानीसे फलाँग गया और जिस वक़्त हुज़ूरने गोली चलाई, उस वक़्त हिरन अपने बाँये पाँवसे कान खुजा रहा था, इसलिये गोली पाँव और कानको ज़ख्मी करती हुई निकल गई।"

सुन जाय और फिर जाकर अपने मर्दसे कह दे। कहीं ऐसा हो गया, तो सारे शहरमें बातका बतगड फैल जायगा। यह बात बेगमके कानोंमें भी पड गई। वह मारे गैरतके उल्टे पाँव अपने घर लौट आई और आमन-पाटी लेकर पड रही। गपोडशाह हैरान थे कि यह यकायक आनन्दकाण्ड-में कोपकाण्ड कैसे प्रारम्भ हो गया। अब उन्हें डर लगने लगा कि कहीं किष्किन्धा-काण्ड शुरू होकर लंका-काण्ड तक नौबत न पहुँचे। अनेक मिन्नतें और खुशामदोंके बाद बेगम बोली—"आखिर तुम मुझे यूँ कबतक जलाओगे? सारे शहरमें बदनामी हो रही है, पर तुम्हारे कानपर जूं तक नहीं रेंगती। मैं पूछती हूँ, तुम्हें इस झूठ बोलनेमें क्या मजा आता है? कभी छठे-चौमासे, होली-दीवाली सच भी बोल लिया करो। बूढे होनेको आये, पर आदमी न बने। यह बाल क्या धूपमें सुखाकर ही सफेद करोगे?

गपोडशाह सहमकर बोले—मैं तो खुद ही इस झूठकी बीमारीसे परेशान हूँ। पर क्या करूँ, यार लोग पीछा छोडें तब न। उनको शक्ल देखते ही झूठकी वहशत सवार हो जाती है। अच्छा लो, हम परदेस जाते हैं। न वहाँ ये लोग होंगे और न हम झूठ बोलेंगे। बस झूठकी आदत छोडकर ही हम तुम्हें अब अपनी शक्ल दिखलायेंगे।

बेगमने खुशी-खुशी सफरकी तैयारी कर दी। यारोंसे विदा होकर गपोडशाह शामके वक्त देशाटनको निकल पडे। बेगम खुश थी कि अब पतिदेव सत्यवादी हरिश्चन्द्र हो बनकर आएँगे। यह सारी बदनामी भलाईमें तब्दील हो जायगी, लोग मुझे भी इज्जतकी नजरसे देखेंगे। उनके आनेपर कुत्तोंको दूध और भूखोंको भरपेट खाना खिलाऊँगी। इसी उधेड बुनमें रात निकल गई, खुशीके मारे उसे नींद न आई। सुबह उठकर उसने देखा, तो गपोडशाह दालानमें पाँव फैलाये हुए दोनों घूटनों-पर हाथ रक्खे हुए हाँप रहे हैं! उनको देखते ही बेगमका माथा ठनका। अन्यमनस्क भावसे पूछा—क्यों, क्या सत्यवादी बन आये?

धर्म-ग्रन्थोंसे

गर्व

भरत चक्रवर्ती छःखण्ड विजय करके वृषभाचल पर्वतपर अपना नाम अंकित करने जब गये, तब उन्हें अभिमान हुआ कि मैं ही एक ऐसा प्रथम चक्रवर्ती हूँ जिसका नाम पर्वतपर सबसे शिरोमणि होगा। किन्तु पर्वतपर पहुँचते ही उनका सारा गर्व खर्व हो गया। जब उन्होंने देखा कि यहाँ तो नाम लिखने तकको स्थान नहीं, न जाने कितने और चक्रवर्ती पूर्वकालमें यहाँ नाम लिख गये हैं। तब लाचार होकर उन्हें एक नाम मिटाकर अपना नाम अंकित करना पड़ा।

पापीसे घृणा

"प्रभो ! क्या मुझे दीक्षित नहीं किया जायगा ?"

"नहीं ।"

"इसका कारण ?"

"यही कि तुम अज्ञातपुत्र हो ।"

"फिर इसका कोई उपाय ?"

"केवल अपने पिताका परिचय करानेपर दीक्षित हो सकोगे ।"

"दीक्षित हो सकूंगा—किन्तु पिताका परिचय कराने पर ! ओह ! मैंने तो उन्हें आजतक नहीं देखा । भगवन् ! दीनबन्धो ! क्या पितृ-हीनको धर्म-रत होनेका अधिकार नहीं है ? सुना है, धर्मका द्वार तो सभी शरणागत प्राणियोंके लिये खुला हुआ है ।'

"वत्स ! तुम्हारा कथन सत्य है । किन्तु तुम अभी सुकुमार हो, इसलिए तुम्हें दीक्षित करनेसे पूर्व उनकी सम्मतिकी आवश्यकता है ।"

१५वर्षका बालक निरुत्तर हो गया । उसके फूलसे गुलाबी कपोल मुर्झा-जैसे गये । सरल नेत्रोंके नीचे निराशाकी एक रेखा-सी खिच गई, और स्वच्छ उन्नत ललाटपर पसीनेकी बूंदें झलक आई । उसका उत्साह भग्न हो गया । घर लौटकर वह अपराधीकी तरह दरवाजेमें लगकर खड़ा हो गया । उसकी स्नेहमयी माँ पुत्रका मुर्झाया हुआ चेहरा देख प्यारसे सिरपर हाथ फेरते हुए बोली—"क्यों मुन्ने, क्या दीक्षित नहीं हुए ?"

"नहीं ।"

"क्यों ?"

"वे कहते हैं, पिताकी अनुमति दिखाओ ।"

माँ ने सुना तो कलेजा थामकर रह गई । उसका पापमय जीवन बाइस्कोपकी तरह नेत्रोंके सामने आगया । वह नहीं चाहती थी कि इस

साधु-परीक्षा

तीनसौ वर्ष पूर्व आगरेमें जब कविवर पं० बनारसीदासजी जीवित थे, तब वहाँ एक साधु आये। साधुके क्षमादि गुणोंकी प्रशंसा सुनी तो कविवर भी दर्शनार्थ पधारे। और दीनतापूर्वक साधु महाराजसे बोले-"दया-सिन्धु! क्या मैं आपका शुभ नाम मालूम करनेकी धृष्टता कर सकता हूँ?"

"मुझे शीतलप्रसाद कहते हैं।"

कविवर नाम सुनकर वहाँ होनेवाली तत्वचर्चामें लीन हो गये। फिर थोडी देर बाद अपना भुलक्कड स्वभाव बताते हुए साधुसे नाम पूछ बैठे। साधुने अन्यमनस्क भावसे नाम दोहरा दिया। कविवरको सन्तोष न हुआ। फिर जरासी देरके बाद नाम पूछा तो साधु महाराज आग-बबूला हो गये और भुँझलाकर बोले—"तू भी अजीब आदमी है। अरे! दस बार कह दिया—हमारा नाम है शीतलप्रसाद! शीतलप्रसाद!! शीतलप्रसाद!!! फिर क्यों दिमाग चाटता है?"

कविवरने साधुका यह कोपकाण्ड देखा तो उठकर चल दिये और जाते हुए बोले—"महाराज! आपका नाम शीतलप्रसाद नहीं, ज्वाला-प्रसाद मालूम होता है।"

लक्ष्य

पीपलके वृक्षपर एक काली मिर्च धागेमें बाँधकर लटकाते हुए गुरु द्रोणाचार्यने कौरव-पाण्डव सब शिष्योंसे कहा—"तुम्हें अपने बाणों से यह मिर्च नीचे गिरानी होगी।"

फिर क्रमशः प्रत्येक शिष्यको उसे बाण द्वारा नीचे गिरानेकी आज्ञा दी। साथ ही बाण छोड़नेसे पूर्व वे प्रत्येक शिष्यसे पूछते जाते थे—"तुम्हें इस वृक्षपर मिर्चके अलावा और क्या दिखाई देता है?"

प्रायः सभी शिष्योंका समान उत्तर था—"वृक्ष, तना, डालियाँ, टहनी, पत्ते, पीपली।" इनमेंसे एक भी लक्ष्यको जब न भेद सका, तब अर्जुनको लक्ष्य भेदनेके लिये आदेश दिया गया और उससे भी पूछा गया—"अर्जुन! तुम्हें काली मिर्चके अलावा और क्या-क्या दिखाई देता है?"

अर्जुनका लक्ष्य काली मिर्चकी ओर था, उसी ओर मुँह किये बोला—"गुरुदेव! यहाँ काली मिर्चके सिवा और तो कुछ भी नहीं है, मुझे तो आप भी दिखाई नहीं दे रहे, मुझे स्वयं अपना अस्तित्व मालूम नहीं।"

गुरुदेवके संकेतपर बाण छूटा और वह काली मिर्चको लेकर नीचे आ गिरा। गुरुदेव अर्जुनको शाबाशी देकर अनुत्तीर्ण शिष्योंसे हँसकर बोले—

"अपने लक्ष्यको छोड़कर जो दूसरी ओर दृष्टिपात करता है, वह सफल नहीं होता। मोक्ष-लोलुप संसारको भी देखे तो मोक्ष कैसे पाये? गुण, गुणी, ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय और ध्यान, ध्येय, ध्याता, तू और मैं, यह और वह का जब अन्तर्द्वन्द्व आत्मामें मचा हो, तब आत्माके परम लक्ष्य परमात्मा पदको प्राप्ति कहाँ? तुम लोग मिर्चको न देखकर टहनी पत्ते ही देख रहे [illegible] लक्ष्य था उसीका भेद न हुआ। यदि अर्जुनकी तरह [illegible] इस प्रयत्नमें सफल होते।"

रूपका मद

सनत्कुमार चक्रवर्तीकी सुन्दरताका बखान जब जीभरकर देवराज कर चुके तो श्रोतृ-मंडलमें एक फुसफुसाहट-सी फैल गई।

कुछने कहा—"देवराज आज आवश्यकतासे अधिक अतिशयोक्ति कर गये हैं।"

एकने टीप कसी—"असत्य भाषण भी एक कला है। आजका मुख्य विषय ही यह था।"

कई एकने अपनी सम्मति बताई—"मालूम होता है सनत् अधिक कुरूप है। देवराजने उपहास करनेका यह नवीन ढंग निकाला है।"

और उन सबमें जो एक मनचला था। उसने मनमें सोचा, "क्यों किसी-की भीतपर आक्रमण किया जाय। चलकर नीर-क्षीर-विवेक ही क्यों न कर लूं?"

प्रातःकाल सनत् चक्रवर्ती मल्लशालामें सहस्रों पहलवानोंको जेर करा चुके थे। मांस फूली हुई थी। शरीर पसीनेसे तर-बतर और धूल धूसरित था। तभी प्रहरीने आकर निवेदन किया—

"एक वृद्ध ब्राह्मण आपके दर्शन करके तीर्थ-यात्राको प्रस्थान करना चाहता है। उससे काफी कहा गया कि महाराज इस समय दर्शन देने योग्य स्थितिमें नहीं हैं। परन्तु उसका आग्रह है कि प्रस्थानका मुहूर्त्त निकट है, दर्शन किये बिना प्रस्थान होगा नहीं और प्रस्थानका समय टालना भी सम्भव नहीं है।"

दर्शन करनेकी अनुमति मिलनेपर विप्रने देखा तो अपलक देखता ही रहा—"इस रूप-छटाका वर्णन तो देवराज सहस्राक्ष भी नहीं कर सके। जिसके रोम-रोमपर कामदेव न्यौछावर होता हो, जिसकी आभा-के सम्मुख रति लोट-पोट होती हो, उसकी सुन्दरताका बखान क्या इसतरह किया जाता था?"

विप्रको रूप देखनेमें निमग्न देखा तो सनत् बोले—"ब्राह्मणदेव ! यदि तुम्हें सचमुच देखनेका चाव है तो हमें दरबारमें देखो।"

विप्रने प्रस्थान स्थगित कर दिया किन्तु रूप देखनेके लोभको संवरण न कर सका।

दरबारमें महाराज आये तो मानो बिजली कौंध गई। वह रूप, और उसपर मणिरत्नोंसे पहने हुए वस्त्र-आभूषण, फिर इसकी महक, पासकी सारी लोग बरबस थामकर रह गये।

"विप्र ! देखा ?"

"देखा, परन्तु वह बात कहाँ ?"

"क्या ?"

"जी, तनिक पीकदानमें थूककर देखिये।"

थूका तो हजारों कीड़े उसमें बिलबिलाहट कर रहे थे। तनिक-सा रूपमद होनेसे देवोंका पुन निमन्त्रण था, उसी मदके उपहारस्वरूप उस नश्वर शरीरमें सैकड़ो रोग आ गये। संसार-वैभवकी क्षणभंगुरताका ध्यान आते ही सनत्ने वैभवको ठुकराकर आत्माके सच्चे रूपको निखारने के लिये वनोंमें जाकर दीक्षा ले ली।

जीवन्मुक्त

एक सेठ अपने कारोबारमें इतने व्यस्त रहते थे कि भोजन और शयन भी समयपर न कर पाते थे और पत्नी-सन्तानसे तो वार्तालाप करनेको समय था ही नही। उनकी पत्नीने एक रोज़ अवसर पाकर कहा—"आप इतनेसे कारोबारमें इतने व्यस्त हैं कि तन-मनकी भी सुध नहीं। जब आपका यह हाल है तो भरत चक्रवर्तीका न जाने क्या हाल होगा जिनके पास ९६ हज़ार रानियाँ और ६ खण्डका राज्य है।"

सेठजी बोले—"मै स्वयं कईबार सोचता हूँ कि वे कैसे इतना बड़ा शासन-कार्य चलाते होंगे और कब-कब वे रानियोंसे वार्तालाप करते होंगे?"

किसी तरह समय निकालकर सेठ साहब दरबारमें गये तो नगर सेठके माने भरतने इनसे कुशलक्षेम तथा उपस्थितिका कारण पूछा। कारण जान लेनेपर भरतने कहा—"सेठ साहब! जब आप आये है तो हमारा रनवास भी देख लीजिये। आप कब-कब आते हैं। आपकी जिज्ञासा की पूर्ति भी कर दी जायगी।"

अन्तःपुरकी महिलासचिवको साथ कर दिया गया और आदेश दे दिया गया कि किसीको भी पहलेसे सूचना देनेकी आवश्यकता नही, जो जिस स्थितिमें है उसे उसी प्रकार रहने दिया जाय। नगर सेठसे कोई परदा नही है। साथ ही नगरसेठके हाथमें एक तेलका भरा हुआ कटोरा दे दिया गया और कानमें कह दिया—"सेठजी, आप जी भरकर हमारा रनवास देखें। परन्तु कटोरेसे तेलकी एक भी बूँद न गिरे यह ध्यान रखें। एक भी बूंद गिरनेसे प्राण सकटमें पड़ जायेंगे।"

सेठजी जब घूमकर आये तो मालूम हुआ कि उन्होने कुछ भी न देखकर कटोरेपर ही ध्यान केन्द्रित रखा, क्योंकि बूँद गिर जानेसे प्राणोंकी चिन्ता थी।

बुद्धकी करुणा

राजकुमार गौतम उद्यानमें सैर कर रहे थे कि उनके पाँवोंके पास एक पक्षी आकर गिरा। राजकुमारने देखा उसके परोंमें एक तीर चुभा है और वह बड़ी बेचैनीसे छटपटा रहा है। दयार्द्र होकर गौतमने पक्षीको उठाया और वे बड़े यत्नसे रक्तमें भीगे हुए तीरको निकालने लगे। गौतम अभी तीर निकाल भी न पाये थे कि हाथमें धनुष-बाण लिए एक शिकारीने आकर रोष-भरे स्वरमें कहा—

"आपको मेरा शिकार उठानेका क्या अधिकार था?"

राजकुमार गौतम स्नेह भरे स्वरमें बोले—"जब आपको उसके प्राण तक लेनेका अधिकार है तब मुझे उसके प्राण बचानेका भी अधिकार न दोगे भाई!"

राजकुमार गौतमकी सहृदयतासे पराजित शिकारी धनुष-बाण फेंक उनके चरणोंमें गिर पड़ा।

युधिष्ठिरका पाठ

कौरव और पाण्डव जब बचपनमें पढ़ा करते थे तब एक रोज उन्हें पढ़ाया गया—"सत्य बोलना चाहिए, क्रोध छोड़ना चाहिए।" दूसरे रोज सबने पाठ सुना दिया किन्तु युधिष्ठिर न सुना सके और वह सोए-हुए-से चुप-चाप बैठे रहे। उनके मुँहसे उस रोज एक शब्द भी नहीं निकला।

गुरुदेव झुँझलाकर बोले—"युधिष्ठिर ! तू इतना मन्दबुद्धि क्यों है ? क्या तुझे चौबीस घण्टेमें ये दो वाक्य भी कण्ठस्थ नहीं हो सकते ?"

युधिष्ठिरका गला भर आया। वह अत्यन्त दीनतापूर्वक बोले—"गुरुदेव, मैं स्वयं अपनी इस मन्द बुद्धिपर लज्जित हूँ। चौबीस घण्टेमें तो क्या, जीवनके अन्त समय तक इन दोनों वाक्योंको कण्ठस्थ कर सका—जीवनमें उतार सका—तो अपनेको भाग्यवान् समझूँगा। कलका पाठ इतना सरल नहीं था जिसे मैं इतनी शीघ्र याद कर लेता।"

गुरुदेव तब समझे कि पाठ याद करना जितना सरल है, उसे जीवनमें उतारना उतना सरल नहीं।

पापीका अन्न

महाभारत-युद्धमें कौरव-सेनापति भीष्म पितामह जब अर्जुनके बाणोंसे घायल होकर रण-भूमिमें गिर पड़े तो कुरुक्षेत्रमें हा-हाकार मच गया। कौरव-पाण्डव पारस्परिक वैर-भाव भूलकर गायकी तरह डकराते हुए उनके समीप आये। भीष्म पितामहकी मृत्यु यद्यपि पाण्डव-पक्षकी विजय-सूचक थी, फिर भी थे तो वे पितामह न? धर्मराज युधिष्ठिर बालकोंकी भाँति फूपा मारकर रोने लगे। अन्तमें धैर्यपूर्वक रुँधे हुए कण्ठसे बोले—

"पितामह! हम ईर्ष्यालु, दुर्बुद्धि पुत्रोंको, इस अन्त समयमें, जीवन में उतारा हुआ कुछ ऐसा उपदेश देते जाइयें जिससे हम मनुष्य-जीवनकी सार्थकता प्राप्त कर सकें।"

धर्मराजके वाक्य पूरा होनेपर अभी पितामहके ओठ पूरी तरह हिल भी न पाये थे कि द्रौपदीके मुखपर एक हास्यरेखा देख सभी विचलित हो उठे। कौरवोंने रोषभरे नेत्रोंसे द्रौपदीको देखा। पाण्डवोंने इस अपमान और ग्लानिको अनुभव करते हुए सोचा—

"हमारे सरसे साया उठ रहा है और द्रौपदीको हास्य सूझा है।"

पितामहको कौरव-पाण्डवोंकी मनोव्यथा और द्रौपदीके हास्यको भाँपनेमें विलम्ब न लगा। वे मधुर स्वरमें बोले—

"बेटी द्रौपदी! तेरे हास्यका मर्म मैं जानता हूँ। तूने सोचा—जब भरे दरबारमें दुर्योधनने साड़ी खींची तब उपदेश देते न बना, वनोंमें पशु-तुल्य जीवन व्यतीत करनेको मजबूर किया गया, तब सान्त्वनाका एक शब्द भी मुँहसे न निकला, कीचक द्वारा लात मारे जानेके समाचार भी साम्यभावसे सुन लिए, रहने योग्य स्थान और क्षुधा-निवृत्तिको भोजन माँगनेपर जब कौरवोंने हमें दुत्कार दिया, तब उपदेश याद न आया।

दृष्टि-भेद

महर्षि व्यासदेवके पुत्र शुकदेव संसारमें रहते हुए भी विरक्त थे। वे आत्म-कल्याणकी भावनासे प्रेरित होकर घरसे जंगलकी ओर चल दिये। तब व्यासदेव भी पुत्रमोहसे वशीभूत, उन्हें समझाकर घर वापिस लिवानेके लिये पीछे-पीछे चले। मार्गमें दरियाके किनारे कुछ स्त्रियाँ स्नान कर रही थीं। व्यासदेवको देखते ही सबने बड़ी तत्परतासे उचित परिधान लपेट लिये—अंगोपांग ढँक लिये।

महर्षि व्यासदेव बोले—"देवियो! वह अभी मेरा जवान पुत्र शुकदेव तुम्हारे आगेसे निकलकर गया है, उसे देखकर भी तुम नहीं सकुचाईं, ज्योंकी त्यों स्नान करती रहीं। जो युवा था, सब तरह योग्य था, उससे तो पर्दा न किया, और मुझ अर्द्धमृतक समान वृद्धसे लजाकर पर्दा कर लिया, यह भेद कुछ समझमें नहीं आया।"

स्त्रियाँ बोलीं—"शुकदेव युवा होते हुए भी युवकोचित विकारोंसे रहित है। वह स्त्री-पुरुषके अन्तरको और उसके उपयोगको भी नहीं जानता, उसकी दृष्टिमें सारा विश्व एक रूप है। सांसारिक भोगोपभोगोंमें बालकके समान अज्ञ है। परन्तु देव! आपकी वैसी स्थिति नहीं है। इसलिये आपकी दृष्टिसे बचनेके लिये परिधान लपेट लिये हैं।"

सौतेला भाई

वनोंमें भटकते हुए पाण्डवोंको प्यास लगी तो सहदेव पानी लेने ता
पर गये। चारों भाइयोंकी जीभ सूखकर तालूसे लग गई म
सहदेव न आये। तब नकुल, भीम, अर्जुन भी एकके बाद एक गये म
कोई भी वापिस न आया। पानी लाना तो दरकिनार, खाली हाथ
कोई न लौटा। तब हारकर स्वयं उनकी टोहमें धर्मराज युधिष्ठिर पधारे
पानी न मिलनेसे जो एक झुँझलाहट मनमें हो रही थी, वहाँ अब चिन्ता
डेरा जमाया। प्यासकी बेचैनीका स्थान बरबस आशंकाने ले लिया।

तालाबपर आकर देखा तो चारों भाई बेहोश पड़े हुए थे। सोचा,
प्यासके कारण ही ऐसा हुआ है। अतः उनके मुँहमें पानी डालनेके लिये
युधिष्ठिरने ज्यों ही तालाबसे पानी लेना चाहा कि एक गूँजती हुई आवाज़-
चौंककर देखा तो सामने एक विशाल मनुष्याकार छाया दीख पड़ी।
छाया द्वारा बतलाया गया कि तालाबपर उसीका अधिकार है।
इस तालाबका पानी वही पीनेका अधिकारी हो सकता है जो उन
के प्रश्नोंका उत्तर दे सके। उसमें चार ये उत्तर थे—

प्र०—उत्तम धर्म कौन-सा है?

उ०—जो दूसरों पुरुषार्थ दिखावे।

प्र०—अनुकरणीय मार्ग कौन-सा है?

उ०—महापुरुष जिस मार्गसे गये हैं।

प्र०—आश्चर्य क्या है?

उ०—मृत्युका न जाना।

प्र०—सुख क्या है?

उ०—निराकुलता।

युधिष्ठिरके उत्तर पसन्द आनेपर पानी पीनेकी आज्ञा भी प्रदान हो
गई। साथ ही पुरस्कार-स्वरूप चारों भाइयोंमेंसे किसी एकका जीवन माँगनेकी
अनुमति भी।

धर्मराजने सहज स्वभाव बतलाया कि माँगना उन्हें कभी आया नहीं, फिर भी बन्धु-प्रेममें लाचार नकुल या सहदेवके जीवन-दानके वे अभिलाषी हैं।

मनुष्याकार छाया ठहाका मारकर हँसती हुई प्यारपूर्ण बोली—"धर्मराज! तुम्हारी मूर्खताके अनेक उदाहरण सुने थे, पर प्रत्यक्ष अनुभव आज ही हुआ। यह निश्चित है कि अन्यायके प्रतिकारके लिए तुम्हें कौरवोंसे युद्ध करना होगा। और उस युद्धमें विजयकी आशा भीम और अर्जुनके सहयोगपर ही अवलम्बित है। फिर भी उनका जीवन न चाहकर सहदेव या नकुलको चाहते हो, जो रण-कौशलसे सर्वथा अनभिज्ञ हैं। मालूम होता है आपत्तियोंकी चट्टानोंसे टकरा-टकराकर तुम्हारी विचार-शक्ति भी नष्ट-भ्रष्ट हो गई है।"

धर्मराज बन्धुओंपर आई हुई इस आपत्तिसे अत्यन्त व्याकुल थे। मनमें मानापमानका ध्यान लाये बिना ही बोले—

"मेरे सम्बन्धमें आप जो भी उचित समझें, सम्मति बनायें। मगर मेरी इस अभिलाषामें मेरा स्वार्थ केवल इतना ही है कि नकुल-सहदेव की जननी मेरी अत्यन्त स्नेहमयी माँ माद्री स्वर्गासीन हो चुकी हैं और अपनी जननी कुन्तीका पुत्र मैं जीवित हूँ ही। यदि इनमेंसे किसी एकको जीवित न कराकर भीम या अर्जुनको जीवित कराता हूँ तो वे सम्भव है यह मानकर व्यथित हों कि संसारमें कुन्तीके दो पुत्र हैं, परन्तु मेरा एक भी नहीं। युधिष्ठिरने अपने सहोदर बन्धुका ही जीवन माँगा, सौतेलेका नहीं। शायद मेरी पक्षपातकी भावना उन्हें तो ठेस न पहुँचाये क्योंकि वे तो संसारकी मान-अपमानसे दूर हैं, परन्तु संसारमें एक भ्रामक उदाहरण प्रस्तुत हो जायगा। इसी कल्पनाके कारण मेरी यह भावना हुई है। आप इसे मेरी मूर्खता भी समझें तो मुझे कोई पछतावा नहीं होगा।"

चारों भाई अँगड़ाई लेते हुए उठ बैठे। छाया जो कौतूहलवश तमाशा देखने खड़ी हो गई थी यह कहती हुई कि—"दुनिया मूर्ख नहीं है जो युधिष्ठिरको धर्मराज कहती है"—अम्बरके कोने-कोनेमें बन्धु-प्रेमका यह समाचार सुनाने दौड़ गई।

इतिहाससे

मुहम्मदकी ख़ूबी

हज़रत मुहम्मद—जबतक अरबवालोंने उन्हें नबी स्वीकृत नहीं किया था तबकी बात है—उन्हें रोज़ाना नमाज़ पढ़ने मस्जिदमें तशरीफ़ ले जाते तो रास्तेमें एक बुढ़िया उनके ऊपर कूड़ा डालकर उन्हें रोज़ाना तंग करती। हज़रत कुछ न कहते, चुपचाप मन ही मनमें ईश्वरसे उसे सुबुद्धि देनेकी प्रार्थना करते हुए नमाज़ पढ़ने चले जाते। इत्तफ़ाक़न मुहम्मदसाहब एक रोज़ उधरसे गुज़रे तो बुढ़ियाने कूड़ा न डाला। हज़रत-के मनमें कौतूहल हुआ—आज क्या बात है जो बुढ़ियाने अपना कर्त्तव्य पालन नहीं किया। दरयाफ़्त करनेपर मालूम हुआ कि बुढ़िया बीमार है। हज़रत अपना सब काम छोड़ उसकी तीमारदारी (परिचर्या) में लग गये। बुढ़िया हज़रतको देखते ही काँप गई और उसने समझा कि आज उसे अपनी उद्दण्डताओंका फल अवश्य मिलेगा। किन्तु बदला लेनेके बजाय उन्हें अपनी सेवा करते देख उसका हृदय उमड़ आया और उसने मुहम्मदसाहबपर ईमान लाकर इस्लामधर्म क़बूल कर लिया।

हज़रतके जीवनमें कितनी ही ऐसी झाँकियाँ हैं जिनसे विदित होता है कि सुधारकोंके पथमें कितनी बाधाएँ उपस्थित होती हैं और उन सबको पार करनेके लिए—विरोधियोंको अपना मित्र बनानेके लिए—उन्हें कितने धैर्य और प्रेममय जीवनकी आवश्यकता पड़ती है। विरोधीको नीचा दिखाने, बदला लेने आदिकी हिंसक भावनाओंसे अपना नहीं बनाया जा सकता। कुमार्गगत भूला-भटका प्रेम-व्यवहारसे ही सन्मार्गपर आ सकता है।

स्वावलम्बी बादशाह

गुलाम-वंशीय नासिरुद्दीन बादशाह अत्यन्त सच्चरित्र और धर्मनिष्ठ था। आजीवन उसने राज-कोषसे एक भी पैसा न लेकर अपनी हस्त-लिखित पुस्तकोंसे जीवन-निर्वाह किया। भारतवर्षका इतना बड़ा बादशाह होनेपर भी, अन्य मुसलमान शासकोंके रिवाजके विपरीत, उसके एक ही पत्नी थी। परन्तु कार्योंके अलावा रसोई भी स्वयं बेगमको बनानी पड़ती थी। एकबार रसोई बनाते समय बेगमका हाथ जल गया तो उसने बादशाहसे कुछ दिनके लिये रसोई बनानेके लिये नौकरानी रख देनेकी प्रार्थना की। मगर बादशाहने यह कहकर बेगमकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी कि—

"राज-कोषपर मेरा कोई अधिकार नहीं है, वह तो प्रजाकी ओरसे मेरे पास धरोहर-मात्र है। और धरोहरमेंसे अपने कार्योंमें व्यय करना अमानतमें ख़यानत है। बादशाह तो क्या प्रत्येक व्यक्तिको स्वावलम्बी होना चाहिए। अपने कुटुम्बके भरण-पोषणके लिये स्वयं कमाना चाहिए। जो बादशाह स्वावलम्बी न होगा, उसकी प्रजा भी अकर्मण्य हो जायगी, अतः मैं राज-कोषसे एक पैसा भी नहीं ले सकता और मेरे हाथकी कमाई सीमित है। उससे तुम्हीं बताओ, नौकरानी कैसे रखी जा सकती है?"

नादिरशाहका एक गुण

नादिरशाह एक साधन-हीन दरिद्र परिवारमें जन्म लेनेपर भी महान् विजेता हुआ है। वह आपत्तियोंकी गोदमें पलकर दुःख-दारिद्र्यके हिण्डोलोंमें झूलकर एक ऐसा विजेता हुआ है कि विजय उसके घोड़ेकी टापकी धूलके साथ-साथ चलती थी। यद्यपि वह स्वभावसे ही क्रूर रक्त-लोलुप मनुष्य था फिर भी स्वावलम्बन उसमें एक ऐसा गुण था, जिसने उसे महान् सेनापतियोंकी पंक्तिमें बैठने योग्य बना दिया था। वह आत्म-विश्वासी था, वह दूसरोंका मुँहदेखा न होकर अपने बाहुओंका भरोसा रखता था। उसने दूसरोंकी सहायतापर अपनी उन्नतिका ध्येय कभी नहीं बनाया, और न अपने जीवनकी बागडोर किसीको सौंपी। जिन कार्योंको वह स्वयं करनेमें अपनेको असमर्थ पाता, उनको उसने कभी हाथ तक न लगाया।

देहली-विजय करनेपर विजित बादशाह मुहम्मदशाह रँगीलेने उसे हाथीपर सवार कराके देहलीकी सैर करानी चाही। नादिरशाह इससे पहले कभी हाथीपर न बैठा था, उसने हाथी भारतमें ही आनेपर देखा था। हाथीके हौदेमें बैठनेपर नादिरशाहने आगेकी ओर झुककर देखा तो हाथीकी गर्दनपर महावत अंकुश लिये बैठा था।

नादिरशाहने महावतसे कहा—"तू यहाँ क्यों बैठा है? हाथीकी लगाम मुझे देकर तू नीचे उतर जा।"

महावतने गिड़गिड़ाते हुए अर्ज किया—"हुजूर! हाथीके लगाम नहीं होती। [illegible] हम फीलवान ही चला सकते हैं।"

वज़ीर कहनेको तो कह गया, परन्तु वह इस तरह काँपने लगा, जैसे उसकी रूह फ़ना हुई जा रही है। बादशाह वज़ीरके व्यंगको समझ गया। वह आत्मग्लानि समेटते हुए बोला—

"वज़ीर! डरो नहीं, मुझे तुम्हारे-जैसे ही वज़ीरोंकी ज़रूरत है। हम हरगिज़ इन उल्लुओंकी मुराद पूरी न होने देंगे। अब ज़िन्दगीका हर-लमहा गाँवोंके उजाड़नेमें नहीं, उन्हें आबाद करनेमें सर्फ़ होगा। काश मेरी आँखें पहले ही खुल गई होतीं।"

गधेकी लात

मिर्ज़ा ग़ालिब उर्दूके अमर शायर हुए हैं। उनके विरोधियोंने कुछ अपमानपूर्ण पत्र भेजे तो वे पढ़कर चुप हो गये। मित्रोंने जवाब देनेके लिए इसरार किया तो फ़र्माया—'अगर कोई गधा तुम्हें लात मारे तो तुम भी उसे क्या लात मारोगे?'

दयालु वज़ीर

नादिरशाह क़त्लेआमका हुक्म देकर देहली-चाँदनीचौककी सुनेहरी मस्जिदमें तलवार बग़लमें रखकर कुरानकी तलावत करने बैठ गया। क़त्लेआमसे दिल्ली भरमें हा-हाकार मच गया। सड़कें लाशोंसे पट गईं। नालियोंका पानी लाल हो गया, चप्पे चप्पेपर इन्सान गिरते नज़र आने लगे। यह राक्षसी कृत्य एक वज़ीरसे न देखा गया। वह दौड़े-दौड़े सुनेहरी मस्जिदमें गया। मगर ज़ालिम ख़ूँख्वार और ज़िद्दी नादिरशाह से क़त्लेआमका हुक्म वापिस लेनेकी प्रार्थना करना अपनी जानसे भी हाथ धो बैठना था। आख़िर दयालु वज़ीरको एक युक्ति सूझ पड़ी। उसने अमीरुल्उमराका यह शेर बादशाहसे अर्ज़ किया—

> कसे न मान्द कि दीगर बतेग़ नाज़ कुशी।
> मगर कि ज़िन्दा कुनी ख़ल्क रा व बाज़ कुशी॥

"कोई आदमी नहीं बचा। सब तुम्हारी कहरकी निगाहके शिकार हो गए। निगाहके नाज़की तलवारने सबको मार डाला। अब निगाहके सुरमेसे लाशोंको ज़िन्दा करो ता उन्हें फिर मारा जाय।" बादशाह इस शेरको सुनकर बहुत व्याकुल हुआ और उसने फ़ौरन क़त्लेआमका हुक्म वापिस ले लिया।

पुरुषार्थ

एक बार हजरत मुहम्मदसे एक व्यक्तिने अपनी निर्धनताका उल्लेख करते हुए आर्थिक सहायताकी याचना की। हजरत थोड़ी देर तो चुप रहे, फिर सोचकर फर्माया—"तुम्हारे पास क्या-क्या चीज मौजूद है?"

निर्धन—मेरे पास एक बोरिया है, जिसके आधे हिस्सेको ओढ़ता हूँ और आधेको बिछाता हूँ, और एक पियाला है, जिससे पानी पीता हूँ।

हजरत—जाओ, वोह प्याला और बोरिया ले आओ।

जब वह गरीब बोरिया और प्याला ले आया तो आपने उसे दो दिरम में नीलाम कर दिया और वे दोनों दिरम उसे देते हुए आदेश दिया—

"एक दिरमका अन्न घरमें डालो और दूसरेकी कुल्हाड़ी खरीदकर मेरे पास लाओ।

जब वह कुल्हाड़ी खरीदकर आया तो आपने फर्माया—'जाओ लकड़ियाँ काट-काटकर बेचो और १५ रोज तक मेरे पास न आओ।"

१५ रोजके बाद वह गरीब आया तो कमाये हुए १० दिरम हजरतके चरणोंमें डालकर बड़े अदबसे एक तरफ खड़ा हो गया। हजरतका मुँह प्रसन्नतासे खिल उठा और उसे इसी तरह पुरुषार्थपूर्वक जीवन व्यतीत करते रहनेको प्रोत्साहन दिया।

जिहाद और रोज़गार

इस्लाममें जिहादको बहुत महत्त्व दिया गया है। उसके लिये तैयार रहना हर मुसलमानका प्रथम कर्त्तव्य बतलाया गया है, किन्तु रोज़गार को जिहादपर भी तरजीह दी गई है क्योंकि भूखा रहकर मनुष्य कोई काम नहीं कर सकता।

एक बार हज़रत उमर मस्जिदमें नमाज़ पढ़ने आये तो देखा एक आदमी जनताको जिहादके लिये उभार रहा है। हज़रत उसकी स्थितिसे भाँप गये कि यह आर्थिक संकटसे तंग आकर जिहादके लिये मजबूर हुआ है, क्योंकि अर्थाभाव भी बहुधा विद्रोह और अनैतिक कार्योंका जनक होता है। यदि देशमें अर्थसंकट दूर न किया जाय और भूखकी ज्वालाको यूँ ही सुलगने रहने दिया जाय तो, यह समूचे देशको भस्मसात् कर देती है।

अतः हज़रतने उसका हाथ पकड़कर जनतासे कहा—"आपमेंसे क्या कोई आदमी इसे नौकरी दे सकता है ?'

एक व्यक्तिके स्वीकृति देनेपर आपने उसे उसके हवाले कर दिया। थोड़े दिनके बाद हज़रतने उसे बुलाया तो मालूम हुआ कि उसकी आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी हो गई है। तब आपने फ़र्माया—

"अब तुम चाहे जिहाद करो, या इन्सानी फराइज़ अदा करो, या अपने बच्चोंकी परवरिश करो, खुदमुख्तार हो।'

आजीविका और परिश्रमपर इस्लाममें बहुत ज़ोर दिया गया है। एक हदीसका अनुवाद इस प्रकार है—

"अगर क़यामत क़ायम हो जाये उस हालमें कि तुम ज़मीनमें खजूर-का पौदा नस्ब करनेके लिये झुके हुए हो तो उस वक़्त तक खड़े न हो जबतक वह पौदा नस्ब न कर लो।

लार्ड विलिंगटन

वास्तवमें बचपनके ही संस्कार भविष्यमें भाग्य-निर्माता होते हैं। होनहार बालकोंकी आभा उनके उदय होनेके पूर्व ही सूर्य-रेखाओंके समान फैलने लगती है। वे इसी अवस्थामें सोते हुए खेल, हँसी-हँसीमें किए गये संकल्प बड़े होनेपर कार्यरूपमें परिणत कर दिखाते हैं।

एक बार बालक विलिंगटनसे किसीने पूछा—"यह टाइमपीस क्या कहती है?"

अबोध विलिंगटनने उत्तर दिया—"वेयर सेज दी टन, टन, टन एण्ड विलिंगटन वुड बी दी लार्ड ऑफ लण्डन (घड़ी कहती है, टन, टन, टन और लण्डनका लार्ड बनेगा विलिंगटन)।"

बालक विलिंगटनकी यह भविष्यवाणी आखिर सत्य निकली।

— —

कर्तव्य-पालन

अमेरिकामें एक बार कुछ भद्र पुरुष लोकहितके कार्य सोचनेको एक कमरेमें एकत्र हुए। उस समय आँधी, वर्षा और तूफानने ऐसा दृश्य उपस्थित किया कि लोगोंने उसे प्रलय समझा। उपस्थित समूहमेंसे एकने कहा—

"अब हमें समस्त कार्य छोड़कर ईश्वर-चिन्तन करते हुए मृत्यु आलिंगन करना चाहिए।"

यह बात सुनकर अध्यक्षने तुरन्त उत्तर दिया—"नहीं, हम जिस कार्यके लिये जमा हुए हैं, हमें वही करते रहना चाहिए। हमें अपना कर्तव्य-पालन करते रहना चाहिए। प्रलय आ रही है, हमें मरना है, इस चिन्तामें नहीं पड़ना चाहिए। ईश्वर-चिन्तनसे ईश्वरके आदेश पालन करते हुए उसकी सृष्टिकी सेवा करते हुए मरना कहीं अधिक श्रेष्ठ है। मृत्यु आ रही है इस भयसे अकर्मण्य होकर ईश्वर-ईश्वर जपनेकी अपेक्षासे श्वास रहे तब तक कर्तव्यपालनमें जुटे रहना ही हमारा कर्तव्य है।'

सद्व्यवहार

सिकन्दरका प्रतिद्वन्द्वी पोरस रणक्षेत्रमें जीवित पकड़े जानेपर सिकन्दरके सामने लाया गया। सिकन्दरने क्रुद्ध होकर कहा—

"बता, तेरे साथ मुझे कैसा व्यवहार करना चाहिए ?"

पोरसने सीना ताने हुए वीरोचित स्वरमें उत्तर दिया—"जैसा बादशाहको बादशाहके साथ करना चाहिए।"

उत्तर सुनकर सिकन्दर क्षण भरको निस्तब्ध रह गया और तत्काल पोरसको मुक्त कर दिया। जो पोरस तिल-तिल टुकड़े कर देनेपर भी न झुकता, वही पोरस सिकन्दरके इस सद्व्यवहारसे उनका गुलाम बन गया।

एब्राहाम लिंकन

चन्द्रगुप्त

भारतका प्रथम ऐतिहासिक सम्राट् चन्द्रगुप्त—जिसने यूनानियोंकी पराधीनतासे भारतको मुक्त किया था, जिसके बल-पराक्रमका लोहा सारे संसारने माना और जिसकी शासन-प्रणालीकी कीर्ति आज भी गूंज रही है, राजवैभवमें उत्पन्न न होकर एक अत्यन्त साधारण निर्धनमें उत्पन्न हुआ था। गांयको गायें चराना और खेलना यही उसका दैनिक कार्य था; किन्तु बचपनमें ही उसके गुण लक्षण प्रकट होने लग गये थे।

वह खेलनेमें स्वयं राजा बनता, किसीको मन्त्री, किसीको कोतवाल, किसीको चोर वगैरह बनाता। चोरोंको दण्ड और सदाचारियोंको इनाम देता। जरा भी उसकी आज्ञा पालनमें हीला-हुज्जत की जाती तो वह अधिकारपूर्ण शब्दोंमें कहता—

"यह राजा चन्द्रगुप्तकी आज्ञा है, इसका पालन होना ही चाहिए।"

उसका यह आत्म-विश्वास, हिम्मत और महत्त्वाकांक्षा देखकर भिक्षुवेषमें चाणक्य बड़ा विस्मित हुआ। उसने कौतुकवश आकर चन्द्रगुप्तके पास जाकर कहा—"राजन्! कुछ हमें भी दान दीजिये।

बालक चन्द्रगुप्त चाणक्यकी बातसे न झिझका, न सकुचाया। उसने राजाओंकी ही तरह आदेश दिया— "सामने जो गायें चर रही हैं उनमें जो भी तुम्हें पसन्द हो [illegible]

[illegible]

[illegible]

वीर जननी

सिद्धराज चावड़ा काठियावाड़का एक अत्यन्त प्रसिद्ध सदाचारी वीर पुरुष हुआ है। किसी मनचले राजाने अपने पुत्रको भी ऐसा ही बना देनेके लिए अपने राज्य-पण्डितको आदेश दिया। आदेश सुनकर राज्य-पण्डित बोला—"अन्नदाता, आपका पुत्र शिक्षा द्वारा सिद्धराजके समान बन तो सकता है, किन्तु उसकी मातामें सिद्धराजकी जननी जैसे गुण भी विद्यमान हैं क्या ?" राजाके पूछनेपर कहा—"जब सिद्धराज अबोध बालक था, तब वह एक रोज़ पालनेमें सो रहा था, उसकी माता उसे झुला रही थी कि अकस्मात् सिद्धराजके पिता वनराज आ गए और वह रानीसे हँसी करने लगे। रानीने कहा—"आप परपुरुषके सामने मेरी लाज गँवाते हैं, यह क्या ठीक है ?" राजाके पूछनेपर रानीने बालककी ओर संकेत कर दिया। वनराजने इसे कुछ भी न समझा और वह और भी छेड़-छाड़ करने लगे। भाग्यकी बात सिद्धराजने जिसकी आयु तब केवल दो माहकी थी, माताकी पर्यंकके बैठनेसे मुँह फेर लिया। रानी बोली—हे भगवान् ! यह सब कुछ बालकने देख लिया और उसने मारे आत्मग्लानिके सिर झुका लिया।" राज्य-पण्डितसे उक्त घटना सुनकर मनचले राजाकी अपने पुत्रको भी सिद्धराज-जैसा बनानेकी अभिलाषा विलीन हो गई।

वीरमहिला

आमेरके विख्यात महाराजा जयसिंहने कोटेकी राजकुमारीके साथ विवाह किया था। उस कोटेकी राजबालाका स्वभाव, उसका आचरण और वेशभूषा अत्यन्त सरल और आडम्बरहीन था। परन्तु सभ्य समृद्धिशाली आमेरके रनवासमें रहनेवालीको अन्य राज-रानियोंके समान अत्यन्त मूल्यवान वस्त्र और आभूषण पहनने चाहिएँ। कोटेकी राजकुमारी विलासप्रिय न होकर वीर स्वभावकी थी, वह सदैव स्वच्छ और सादगीसे रहती थी। एक बार महाराजा जयसिंहने कहा—"कोटे-की राजरानियोंकी अपेक्षा हमारे यहाँकी नीच जातिकी स्त्रियाँ भी अच्छे सुन्दर रमणीक वस्त्र और आभूषण पहनती हैं।" कुछ देर पश्चात् एक बाँसका टुकड़ा लेकर रानीके पहने हुए वस्त्रोंको काटने लगे। कोटेकी राजकुमारीने यह कृत्य अपनी आत्म-प्रतिष्ठा और स्वाभिमानका घातक समझा। झट पासमें रखी हुई तलवार, उठा ली और गरजकर बोली—"मैंने जिस वंशमें जन्म लिया है, वह राजवंश कदापि इस प्रकारकी घृणा और उपहासके योग्य नहीं है। आप इस बातको स्मरण रखिये कि स्त्री-पुरुषोंमें पारस्परिक प्रेम, सद्भाव, सम्मान होनेसे दाम्पत्य सुख ही नहीं अपितु धर्मकी भी रक्षा होती है।" फिर उस वीरबालाने कहा—"महाराज! यदि विलासिता चाहते हो, तो वेश्याओंके यहाँ जाओ, मुगलोंकी चौखटें चूमो, मैं वीरबाला हूँ, वीरवेष पहनना जानती हूँ, रणका साज सजाना जानती हूँ और जानती हूँ, तलवारके हाथ। आओ सामने, तब आप भली प्रकार समझेंगे कि आमेरके राजकुमार बाँसके टुकड़ोंसे चलानेमें इतने चतुर नहीं हैं, जितनी कोटेकी राजकुमारी तलवारके हाथ चलानेमें निपुण होगी"। विलासी महाराज भौंचक्के रह गये। वीरपत्नीका वीररूप देखकर उनकी विलासिता नष्ट हो गई। वे चरणोंमें गिर गये

और बोले—"देवी ! क्षमा करो, मैंने तुम्हें समझनेमें भूल की । वास्तवमें तुम्हारे जैसी वीरबालाओंसे ही आज आर्य जातिका गौरव है । अन्यथा हमारे जैसे विलासी तो कभीके हिन्दू जातिको रसातलमें भेज चुके होते ।"

द्वार०—वह परतन्त्र नहीं अपितु यवन बादशाहके दाहिने हाथ हैं।

रानी—यह भी किसलिये? अपने देशवासियोंको नीचा दिखानेके लिए मायावी यवन बादशाह काँटेसे काँटा निकालना चाहता है।

द्वार०—अर्थात्?

रानी—यही कि वह कुछ राजपूतोंको अपने पक्षमें करके भारतके समस्त राजपूतोंको गिरती बनाना चाहता है। भारतके हाथों भारत-सन्तानका पतन चाहता है। भोले द्वारपाल! याद रखो! स्वामी सेवक का चाहे जितना आदर क्यों न करे, चाहे मणिमुक्ता देकर उसको सोनेकी जंजीरसे क्यों न सजा दे, परन्तु जो दास है, वह तो सदा दास ही रहेगा!

द्वार०—महारानीजी! आपका वचन सत्य है, किन्तु राना फिर भी पति हैं, उनका अपमान करनेसे क्या लाभ? क्षमा कीजिये मैं आपको कुछ सीख नहीं दे रहा हूँ, परन्तु फिर भी पुराना सेवक होनेका अभिमान रखते हुए मैं यह प्रार्थना करता हूँ कि आप इस समय तो उन्हें अन्तःपुरमें बुलाकर सान्त्वना दें, पश्चात् क्षत्रियोचित कर्तव्यका ज्ञान करानेके लिए कुछ उतार-चढ़ावकी बातें भी करें! इसके विपरीत करनेसे जग हँसाई होगी और प्रजा भी उद्दण्ड हो जायगी।

द्वारपालके समय-विरुद्ध व्याख्यानको सुनकर सिसोदिया-कुलोत्पन्न वीरांगना झल्ला उठी, किन्तु द्वारपालकी स्वामि-भक्तिने क्रोधके पारेको आगे न बढ़ने दिया, वह सहन कर बोली—

'तुमसे अधिक मेरे हृदयमें उनका मान है। वह मेरे ईश्वर हैं, मेरे देवता हैं, मैं उनकी पुजारिन हूँ। परन्तु [illegible]

है जब तक भी वह कुबेर भीग जाएँगे। भगवान मैं नहीं चाहती कि मेरे देवरानी कायर बनें।"

कुछ क्षणोंतक अवाक् रह गया! वह किंकर्तव्यविमूढ़की नाईं पृथ्वी कुरेदने लगा।

× × ×

[illegible]

जायें। अस्तु, जो होना था सो हो चुका। किन्तु ठहर, मैं मेरा जीवन समाप्त कर देना चाहती हूँ। यह कायरपत्नी नहीं कहलाना चाहती तो मैं भी कायर पुत्रको जीवित रखना नहीं चाहती।"

क्रोधके आवेशमें वीरमाता कटार निकालकर मारना ही चाहती थी, कि जगदर्नसिंह रोकर पैरोंपर गिर पड़े। फिर तलवार निकालकर प्रतिज्ञा की—'माता ! जब तक मैं जीवित रहूँगा युद्धमें रहूँगा युद्धसे कभी विमुख नहीं होऊँगा। जबतक शत्रुओंका नाश नहीं कर लूँगा कभी सुखसे न बैठूँगा।

सेवकका कर्त्तव्य

मेवाड़-केसरी महाराणा प्रताप मौतके शिकंजेमें जकड़े हुए थे। वह लोहेके कटघरेमें फँसे हुए शेरकी भाँति रोग-शय्यापर पड़े छटपटा रहे थे। अस्फुट वेदनाके चिह्न उनके मुखसे भली भाँति प्रकट हो रहे थे। आँखोंके कोनेमें छुपे हुए आँसू मौन-वेदनाका सन्देश दे रहे थे। वीर चूड़ामणि महाराणा प्रतापने पूर्वजोंकी बनाई हुई गगनचुम्बी अट्टालिकाओंको छोड़कर पीछोला सरोवरके किनारेपर कई एक झोंपड़ियाँ बनवाई थीं। उन्हीं कुटियोंमें अपने समस्त सरदारोंके साथ राणाजी अपना दार्शनिक जीवन व्यतीत करते थे। आज अन्तकालके समय भी उन्हींमेंसे एक साधारण कुटीमें रुग्ण-शय्यापर लेटे हुए मृत्युकालकी बाट जोह रहे थे। इतनेही प्रचण्ड वेगसे शरीरको कम्पायमान करती हुई एक सर्द साँस महाराणाके मुँहसे निकली। समीपमें बैठे हुए उनके जीवनके सखा, मेवाड़के सामन्त और सरदार, उनकी इस मर्मान्तिक वेदनाको देखकर काँप उठे। शालुम्बा-सरदार कातर होकर रुँधे हुए स्वरमें बोले—"अन्नदाता ! इस अन्तिम समयमें आपको ऐसी क्या चिन्ता है ? किस दारुण दुःखके कारण आप छटपटा रहे हैं ? आपका यह दीर्घ निःश्वास हमारे हृदयमें तीरकी तरह चुभ रहा है। यदि कोई अभिलाषा है, तो कृपा करके कहिये, हम सब आपकी इस अन्तिम इच्छाको जीवनके अन्त समय तक अवश्य पूर्ण करेंगे।"

मेवाड़का वह टिमटिमाता हुआ दीपक शालुम्बा सरदारके आश्वासन-भरी तेलको पाकर फिर प्रज्वलित हो उठा। महाराणा प्रताप अपने शरीरकी रही-सही शक्ति लगाकर यह बोल उठे— "प्यारे सखा ! तुमने ठीक समझा [illegible] है ! [illegible] सरदार [illegible] प्रश्न ! मेरी [illegible] थी [illegible] जिसके लिए [illegible] इसमें [illegible] [illegible] रक्षा-

भूमिपर स्वतंत्र विचरते हुए न देख सका; यह क्या कम कष्ट है! यही दारुण वेदना मेरे प्राणोंको रोके हुए है।"

शालुम्ब्रा-सरदार मस्तक भुकाकर बोले—"श्रीमन्! आपकी यह पवित्र अभिलाषा अवश्य पूर्ण होगी। आप किसी प्रकारकी चिन्ता न करके एकाग्रचित्तसे भगवान्का स्मरण करिये..."

शालुम्ब्रा-सरदारके वाक्य पूर्ण होनेतक महाराणा प्रतापका विषादपूर्ण पीला मुँह गम्भीर हो गया, वह बीचमें ही बात काटकर बोले—

"ओह! शालुम्ब्रा-सरदार, मुझे वाक्य-पटुतामें न फँसाओ। मुझे इस समय धर्मोपदेशकी आवश्यकता नहीं। देश परतन्त्र रहे, और मैं इस अन्त समयमें भगवान्का स्मरण करके परलोक सुधारूँ? छि:! कैसी वाक्य-विडम्बना है? मेरे मित्र! याद रक्खो, जो इस लोकमें परतंत्र हैं, वह परलोकमें भी परतन्त्र रहेंगे। जो व्यक्ति अपने देशवासियोंको दुख-सागरमें बिलखते देखकर अकेला मोक्ष पाना चाहता है, वह न तो मोक्ष पाता है, न पानेके योग्य है। त्रिशंकुकी तरह उसको बीचमें ही लटकना पड़ता है। यदि मेरे नरकमें रहनेसे भी मेरा देश स्वतंत्र हो सकता है, तो मैं नरककी दुस्सह वेदना सहन करनेको प्रस्तुत हूँ। बोलो, बोलो, क्या कहते हो? शपथ करो कि इन विदेशियोंका विध्वंस करके मातृभूमिको स्वतंत्र कर देंगे।"

सामन्त और सरदार व्यग्र हो उठे, राणाजीकी यह अभिलाषा क्योंकर पूर्ण होगी? जीवन भर लड़ते हुए भी जिसे अपना न कर सके, उसे अब कैसे स्वतंत्र कर सकेंगे? तब भी सन्तोषके लिए आश्वासन देते हुए बोले—"भारत-सम्राट्! आपकी यह अभिलाषा वीरोचित है। आप विश्वास रखिये, श्री बापजीराव (युवराज अमरसिंह) आपकी इस अंतिम कामनाको श्री एकलिंगजीकी कृपासे अवश्य पूर्ण करेंगे।"

वीर-शिरोमणि महाराणा प्रताप चुटीले साँपकी तरह फुफकार कर बोले—"अमर चित्तौड़को तो क्या स्वतन्त्र करेगा वह रहे-सहे मेवाड़के

गौरवको भी खो बैठेगा। उसके आगे मेवाड़की पवित्र भूमि म्लेच्छोंके पाद-प्रहारसे कुचली जायगी।"

समस्त सरदार एक स्वरमें बोल उठे—"अन्नदाता! ऐसा कभी न होगा।"

दीप निर्वाण होनेके पूर्व एक बार प्रज्वलित हो उठता है। उसी प्रकार राणाजी शक्ति न रखते हुए भी आवेशमें कहने लगे—"मैं कहता हूँ, ऐसा अवश्य होगा। युवराज अमरसिंह हमारे पितृ पुरुषोंके गौरवकी रक्षा नहीं कर सकेगा। वह यवनोंसे युद्ध न करके मेवाड़की कीर्ति-रूपी स्वच्छ चादरपर विलासिताका स्याह धब्बा लगा देगा।"

कहते-कहते उनका गला रुँध गया। सरदारके दो घूँट पानी पिलानेके पश्चात् वह क्षीण स्वरमें बोले—"एक समय कुमार अमरसिंह उस नीची कुटीमें प्रवेश करनेके समय सिरकी पगड़ी उतारना भूल गया था। इस कारण सिरकी पगड़ी द्वारके निकलते हुए बाँसमें लगकर नीचे गिर पड़ी। अमरसिंहने इस कुटीके महत्वको कुछ भी न समझा और दूसरे दिन मुझसे कहा कि यहाँ पर बड़े-बड़े महल बनवा दीजिये!"

युवराज अमरसिंहके बाल्यकालकी गाथा कहते हुए राणाजीका पीनमुख और भी गम्भीर हो गया उन्होंने फिर एक लम्बी साँस ली और बोले—"इन कुटियोंके बदले यहाँ रमणीय महल बनेंगे। मेवाड़की दुरवस्था भूलकर अमर यहाँपर अनेक प्रकारके भोग-विलास करेगा। उससे इस कठोर व्रतका पालन नहीं होगा। हा! अमरसिंहके विलासी होनेपर वह गौरव और मातृभूमिकी वह स्वाधीनता भी जाती रहेगी जिसके लिये मैंने बराबर २५ वर्ष तक वनमें और पर्वत-पर्वतपर घूमकर वनवासका कठोर व्रत धारण किया। जिसको अक्षत रखनेके लिये सब भाँतिकी सुख-सम्पत्तिका छोड़ा। शोक है कि अमरसिंहसे इस गौरवकी रक्षा न होगी। वह अपने सुखके लिये उस स्वाधीनताके गौरवको छोड़ देगा और तुम लोग, उसके अनर्थकारी

उदाहरणका अनुसरण करके मेवाडकी पवित्र और धवल कीर्त्तिमें कलंक लगा दोगे।"

महाराणाका वाक्य पूरा होते ही समस्त सरदार मिलकर बोले—"क्षमा, अन्नदाता! महाराज! हम लोग बप्पारावलके पवित्र सिंहासनकी शपथ खाकर कहते हैं कि जब तक हममेंसे एक भी जीवित रहेगा, उस दिनतक कोई तुरक मेवाडकी भूमिपर अधिकार नहीं पा सकता जब तक मेवाड-भूमिकी स्वाधीनता पूर्ण भावसे प्राप्त न कर लेंगे, तबतक इन्हीं कुटियोंमें हम लोग रहेंगे।"

सरदारोंकी वीरोचित शपथ सुनकर हिन्दू-कुल-भूषण वीर-चूडामणि राणा प्रतापके नमन भरोखोंसे आनंदाश्रु झलकने लगे। वह नेत्र विस्फारित करके मुस्कराते हुए "भारत माताकी जय", "मेवाड भूमिकी जय" इतना ही कह पाये थे, कि उनकी आत्मा स्वर्गासीन हो गई। मेवाड़वासी दहाड़ मारकर रोने लगे, मेवाड़ अनाथ हो गया।

× × ×

वीर-केसरी प्रतापके स्वर्गासीन होनेपर युवराज अमरसिंहको राघव-वंशीय सूर्यकुल-भूषण बप्पारावलके पवित्र सिंहासनपर बैठनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। महाराणा अमरसिंहमें असाधारण गुण थे। उन्होंने अपने शासन-कालमें मेवाड़में कई आदर्श सुधार किये। किन्तु, स्वेच्छाचारिता और विलासिता दो ऐसे अवगुण हैं, जो मनुष्यके अन्य उत्तम गुणोंपर भी पर्दा डाल देते हैं। दुर्भाग्यसे राणा अमरसिंह भी प्लेग, हैजेके समान उड़कर लगनेवाली विलासितारूपी बीमारीसे न बच सके। वे दिन-रात आमोद-प्रमोदमें रहने लगे। उनके पूर्वज क्या थे, इस समय मातृ-भूमि कैसे संकटमें है, भारतीय आर्य-ललनाओंकी कैसी दुरवस्था है, इस बातकी न तो उन्हें कुछ खबर ही थी और न कुछ चिन्ता। वे दिन-रात महलोंमें रंग राग सुन्दरियोंके साथ अनेक क्रीडाएं किया करते। जो झूठ बोलनेमें कपट करनेमें मायाचारी करनेमें जितना सिद्धहस्त होता वह उतना ही

पृथ्वी—कविताने सैनिकोंके हृदयमें वीर-भाव उत्पन्न होते हैं। चन्दवरदाईका नाम उसकी कविताके कारण अमर हो गया है।

युवती—हां, यदि कवितामें हृदयके भाव हों, और स्वयं कवि भी अपने कथनानुसार कर्मवीर हो तब न ? जब लोगोंको यह मालूम होगा कि यह कवि उस अकर्मण्यकी है, जो परतन्त्रताके बन्धनमें जकड़ा हुआ था, जो अपनी बहनका सर्वनाश आंखोंसे देखता रहा, तब वह आपकी कविता उपहास करेंगे। चन्दवरदाईका नाम कविताके कारण नहीं, उसकी वीरताके कारण अमर है।

पृथ्वी—साहित्य और संगीतसे रहित मनुष्य पशु है।

युवती—लेकिन यदि किसी घरमें आग लगी हो, तो उसके निवासियों को गाने-बजाने देखकर तुम क्या कहोगे ?

पृथ्वी—मूर्ख कहूँगा, और क्या ?

युवती—क्यों ? गाना तो कोई बुरी चीज नहीं।

पृथ्वी—बुरी चीज नहीं, किन्तु उस समय उसकी आवश्यकता नहीं। समयपर ही सब कार्य अच्छे लगते हैं।

युवती—बस, आपके कथनानुसार फैसला हो गया। कविता करना बुरा नहीं, किन्तु इस समय उसकी आवश्यकता नहीं।

पृथ्वी—इसका तात्पर्य ?

युवती—यही कि आप क्षत्रिय हैं। भारतमाताको इस समय वीर-पुत्रोंकी आवश्यकता है। आप ही सोच लें, यदि आज वीर राजपूत समस्यापूर्तिमें लगे रहें, तो फिर देशकी समस्याको कौन हल करेगा ?

पृथ्वी—तो तुम क्या चाहती हो ?

युवती—यही कि देशसेवाके व्रतमें केसरिया बाना पहनकर शत्रुओं-का संहार करो। आज इनके अत्याचारोंसे भारत माता रुदन कर रही है, स्त्री-बच्चोंकी गर्दनोंपर निर्दयतापूर्वक छुरी चलाई जा रही है, वीर ललनाओंका बलपूर्वक शील नष्ट किया जा रहा है। अतएव इस समय

मुसलमान व्यापारियोंकी स्त्रियाँ अनेक देशोंके विलक्षण पदार्थ लाकर उस मेलेमें बारबार बिक्री किया करती थीं। और राज-परिवारोंकी स्त्रियाँ वहाँ जाकर मनमानी सामग्री मोल लिया करती थीं। पाखण्डी अकबर भी भेष बदले हुए वहाँ जाता था और किसी-न-किसी सुन्दर युवतीको अपने षड्यन्त्रमें फाँस लिया करता था। एक समय पृथ्वीराजकी पत्नी किरन भी उक्त मीना बाजारकी सैर करने गई। अकबरने इसे धोखेमें भुलावा देकर महलोंमें बुला लिया। किरन अकबरके पैशाचिक भावको ताड़ गई, लपककर उसकेमें बैठ बादशाहको दे मारा और कमरसे एक छुरा निकाल बादशाहकी छातीपर बैठ सिंहनीकी तरह गरजकर बोली—"ईश्वरके नामसे शपथ करके कह कि और किसी अबलाके शील नष्ट करनेकी इच्छा नहीं करूँगा। कह, शपथ कर, नहीं तो यह तीक्ष्ण छुरी अभी तेरे हृदयके रुधिरसे स्नान करेगी।" कायर अकबर प्राणोंकी भिक्षा माँगने लगा, उसने नम्रतापूर्वक वीर बालाकी आज्ञाका पालन किया। वीर नारी किरन ने भी अकबरको जीवन दान दिया।

इसी घटनासे घायल सिंहनीकी तरह जब किरन अपने मकानपर आई, तब वहाँ पृथ्वीराजका सीसोदिया कुल और शक्तावत वंशका गौरवरूपी समुद्र उमड़ आया और उसी आवेशमें अपने पतिको उसके धर्मविमुख कर्त्तव्यका ज्ञान करानेके लिए अट्-मट अपना नवरत्न ताज दे दिया। सिसोदिया राज-कन्याओंने स्वभावतः यश न लिया आज दी है। उन्होंने कभी अपने उज्ज्वल कुलमें कलंक नहीं लगने दिया। यही कारण है कि उस समय किरन सिसोदिया राज-कुमारी ब्याही जाती थी वह सारे घरके पर उठता था और उसके भाग्यकी सराहना करते थे। चित्तौड़ राजकुमारी पटरानी रहती, उसीकी सन्तान राज्य की उत्तराधिकारिणी होती इन शर्तोंपर वे ब्याही जाती थीं। इसी वीरबाला किरनने महाराणा प्रतापका सन्धिपत्र जो अकबरके पास आया था उसके उत्तरमें अपने पति पृथ्वीराजसे वीरोचित भावमें एक पत्र लिखवाया था, जिसे पढ़कर महाराणा प्रताप फिर अपने मार्गपर दृढ़ताके साथ अग्रसर हुए थे।

को पार दबाती है; लोभ दयाको स्थिर नहीं रहने देता । जो बनवीर विक्रमा-जितको गद्दीसे उतारकर राज्य-प्राप्त करना घोर पाप समझता था, वही बनवीर राज्यासनपर बैठते ही सदा निष्कंटक राज्य करते रहनेकी कूट नीति सोचने लगा । वह राज्यके यथार्थ उत्तराधिकारी बालक उदय-सिंहको अपने पथमें बाधा समझकर उसे मिटा देनेके लिये क्रूर रात्रिकी बाट जोहने लगा । धीरे-धीरे रात्रि हो गई । कुमार उदयसिंहने भोजनादि करके शयन किया । उनकी धाई सिरहानेपर बैठ सेवा करने लगी । कुछ विलम्बके पीछे रनवासमें घोर आर्तनाद और रोनेका शब्द सुनाई आने लगा । इस शब्दको सुनकर पन्ना धाय विस्मित हुई । वह इसे उतना ही जानती थी कि इतनेमें ही बारी (नाई) राजकुमारकी जूठन आदि उठानेको वहाँ आया और भय विह्वल भावसे कहने लगा—"बड़ा बुरा हुआ, सत्यानाश हो गया, बनवीरने राणा विक्रमाजितको मार डाला ।" धाईका हृदय कांप गया, वह समझ गई कि निष्ठुर हृदय बनवीर केवल विक्रमाजितको ही मारकर चुप न रहेगा, वरन् उदयसिंहको मारनेको भी आवेगा । उसने तत्काल बालक उदयसिंहको जिसकी अवस्था इस समय १५ वर्षकी थी किसी युक्तिसे बाहर निकाल दिया और उसके स्थानपर उसी अवस्थाके अपने पुत्रको सुला दिया । इतनेमें ही रक्त-लोलुपी पिशाच-हृदय बनवीर आ पहुँचा और बालक उदयसिंहको खोजने लगा । तब पन्ना धायने इस रक्त-पिपासुको अपने पुत्रकी ओर संकेत कर दिया, उस [illegible] उसीको राजकुमार समझ उसके कोमल हृदयमें खंजर मार दिया । बालक सदैवको सो गया । पन्ना धायने अपने स्वामीके हितार्थ अपने बालकका बलिदान करके उफ [illegible] तक न की । अपने पुत्रके मारे जानेपर [illegible] उदयसिंहके पास आ पहुँची । आगे [illegible] [illegible] है कि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

इतना कहकर वह भूखी शेरनीकी भाँति आसाशाहपर झपट पड़ी और चाहती थी कि ऐसे नराधम, भीरु, कायर और अधर्मी पुत्रका गला घोट दे, कि आसाशाह अपनी वीर-माताके पाँवोंमें गिर पड़ा। उसकी भीरुता हिरन हो गई। वह घुटने टेक अश्रुबिन्दुओंसे अपनी वीर-माताके चरण-कमलोंका अभिषेक करने लगा। वह मातृ-भक्त गद्-गद् कण्ठसे बोला—'माँ! तुम्हारा पुत्र होकर भी मैं यह भीरुता कर सकता था? क्या सिंहनी-पुत्र शृगालके भयसे अपने धर्मसे विमुख हो सकता है? क्या प्राणोंके तुच्छ मोहमें पड़कर मैं शरणागतकी रक्षा न करके अपने धर्मसे विमुख हो सकता था? मेरी अच्छी अम्मा! क्या वास्तवमें तुम्हें यह भ्रम हो गया था?"

आसाशाहके वीरोचित शब्द सुनकर वीर-माताका हृदय उमड़ आया वह उसके सिरपर प्यारसे हाथ फेरने लगी। आसाशाह माताका यह व्यवहार देखकर मुस्करा कर बोला— "माँ यह क्या? अभी तो तुम मेरा जीवन समाप्त कर देना चाहती थीं और कहाँ [illegible]"

वीर-माता बात काटकर बोली— बेटा क्षत्राणियोंका अद्भुत स्वभाव होता है। वह कर्तव्य-विमुख पुत्र या पतिका मुँह देखना नहीं चाहती, किन्तु कर्तव्य-परायणकी वह बलाएँ लेती है, उसके लिए मिट जाती है।"

वीर आसाशाहने कुमार उदयसिंहको अपना भतीजा कहके प्रसिद्ध किया और युवा होनेपर आसाशाहने उदयसिंहको अन्य सामन्तोंकी सहायतासे चित्तौड़का सिंहासन दिला दिया। जबकि मेवाड़के बड़े-बड़े सामन्त, राज्यसे बड़ी-बड़ी जागीर पानेवाले चित्तौड़के यथार्थ उत्तराधिकारी कुमार उदयसिंहको शरण न दे सके तब एक जैन-धर्मावलम्बी महाजन जो कार्य किया वह [illegible] सम्प्रदाय युगमें [illegible] पाबन्दी-

को शरण देनेवाला दण्डनीय होता है. तब उन जमानेमें जब कि राजा ही सर्व-सर्वा होता था, वह बिना किसी अदालतके अपनी इच्छानुसार मनुष्योंके प्राण-हरण कर सकता था, तब ऐसे सङ्कटके समय भी उस महिलारत्नने जो कार्य कर दिखाया वह आदर्श है।

भामाशाह

स्वाधीनताकी लीलास्थली वीरप्रसवा मेवाड़भूमिके इतिहासमें राणा-प्रतापके साथ भामाशाहका नाम सदैव अमर रहेगा। इतिहासप्रसिद्ध हल्दीघाटीके युद्धमें वीर भामाशाह और उसका भाई ताराचन्द भी लड़ा था[1]। २१ हज़ार राजपूतोंने असंख्य यवनसेनाके साथ युद्ध करके स्वतन्त्रताकी वेदीपर अपने प्राणोंकी आहुति दे दी, किन्तु दुर्भाग्य कि वे मेवाड़को यवनों द्वारा पददलित होनेसे न बचा सके। समस्त मेवाड़पर यवनोंका आतंक छा गया। युद्ध-परिस्थिति करनेपर राणा प्रताप मेवाड़का पुनरुद्धार करनेकी प्रबल आशाको लिये हुए बीरान जंगलोंमें भटकते फिरते थे। उनके ऐशो-आराममें पलने योग्य बच्चे, भोजनके लिये उनके चारों तरफ रोते रहते थे। उनके रहनेके लिये कोई सुरक्षित स्थान न था। अत्याचारी मुगलोंके आक्रमणोंके कारण बना-बनाया भोजन कईबार राणाजीको छोड़ना पड़ा था। इतने पर भी आनपर मिटनेवाले समर-केसरी प्रताप विचलित नहीं हुए। वह अपने पुत्र और सम्बन्धियोंको प्रसन्नतापूर्वक रणक्षेत्रमें अपने साथ रहते हुए देखकर यही कहा करते थे कि राजपूतोंका जन्म ही इसलिये होता है। परन्तु उस पर्वत-जैसे स्थिर मनुष्यको भी आपत्तियोंके प्रलयकारी

१ हल्दीघाटीका यह विख्यात युद्ध १८ जून सन् १५७६ ईस्वीको एक घड़ी दिन चढ़े प्रारम्भ हुआ था और उसी दिन सायंकालतक समाप्त हो गया था। (चाँद, वर्ष ११, पूर्ण संख्या १२९, पृष्ठ ११८) और अब हर्ष है कि कुछ वर्षोंसे ज्येष्ठ शुक्ला ७ को इस स्वतन्त्रता बलिदान दिवस की पवित्र स्मृतिमें कुछ कर्मवीरोंने वहाँ मेलेका आयोजन करके किसी कविके निम्नलिखित उद्गारोंकी पूर्ति की है।

[illegible]

[illegible]

ता धन को बनिया ह्वै गिन्यो न,
दियो दुख देश के आरत होई।
स्वारथ अर्थ्य तुम्हारोई है,
तुमरे सम और न या जग कोई॥

देशभक्त भामाशाहका यह कैसा अपूर्व स्वार्थ-त्याग है? जिस धनके लिये कैकेयीने रामको १४ वर्षके लिये वनवास भेजा, जिस धनके लिये पाण्डव और कौरवोंने १८ अक्षौहिणी सेना कटवा डाली, जिस धनके लिये बनवीरने बालक उदयसिंहकी हत्या करनेकी असफल चेष्टा की, जिस धनके लिये मारवाड़के कई राजाओंने अपने पिता और भाइयोंका संहार किया, जिस धनके लिये लोगोंने मान बेचा, धर्म बेचा, कुल-गौरव बेचा, साथ ही देशकी स्वतन्त्रता बेची, वही धन भामाशाहने देशोद्धारके लिये प्रतापको अर्पण कर दिया। भामाशाहका यह अनोखा त्याग धन-लोलुपी मनुष्योंकी बलात् आँखें खोलकर उन्हें देशभक्तिका पाठ पढ़ाता है।

भारमलके[1] स्वर्गवास होनेपर राणा प्रतापने भामाशाहको अपना मन्त्री नियत किया था। हल्दीघाटीके युद्धके बाद जब भामाशाह मालवेकी ओर चला गया था तब उसकी अनुपस्थितिमें रामा सहाणी महाराणाके प्रधानका कार्य करने लगा था। भामाशाहके आनेपर रामासे प्रधानका कार्य-भार लेकर पुनः भामाशाहको सौंप दिया गया। उसी समय किसी कविका कहा गया प्राचीन पद्य इस प्रकार है—

भामो परधानो करे रामो कीधो रद्द[2]।

भामाशाहके दिये हुए रुपयोंका सहारा पाकर राणा प्रतापने फिर बिखरी हुई शक्तिको बटोरकर रण-भेरी बजा दी, जिसे सुनते ही शत्रुओं-के हृदय दहल गये, कायरोंके प्राण-पखेरू उड़ गये, अकबरके होश-हवाश जाते रहे। राणाजी और वीर भामाशाह अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित होकर

१—भामाशाहका पिता।
२—राजपूतानेका इतिहास ती० खं० पृ० ७४३।

[illegible]

[illegible]

१ राजपूतानेका इ० पृ० ७८७-८८।

२ मेवाड़का प्रमुख और प्रमाण ऐतिहासिक ग्रन्थरत्न 'वीरविनोद' में जिसको कि मुझे सोमायगमें मान्य सीताओंके यहा देखनेका अल्प-सा अवसर मिला था पृ० २५१ पर लिखा है कि—

"भामाशाह बड़ी जुरअतका आदमी था। यह महाराणा प्रतापसिंहके शुरू समयसे महाराणा अमरसिंहके राज्यके २॥-३ वर्ष तक प्रधान रहा। इसने ऊपर लिखी हुई बड़ी-बड़ी लड़ाइयोंमें हजारों आदमियोंका खर्च चलाया। यह नामी प्रधान संवत् १६५६ माघ शुक्ल ११ (हि० १००८ ता० ६ रजब ई० १६०० ता० २७ जनवरी)को ५१ वर्ष और ७ महीनेकी उमरमें परलोकको सिधारा। इसका जन्म संवत् १६०४ आषाढ़ शुक्ल १० (हि० ९५४ ता० ६ जमादिउल अव्वल ई० १५४७ ता० २८ जून) सोमवारको हुआ था। इसने मरनेके एक दिन पहले अपनी स्त्रीको एक बही अपने हाथकी लिखी हुई दी और कहा कि इसमें मेवाड़के खजानेका कुल हाल लिखा हुआ है। जिस वक्त तकलीफ़ हो यह बही उन महाराणाको नज़र करना। यह खैरख्वाह प्रधान इस बहीके लिखे मुआफ़िक़ खजानेसे महाराणा अमरसिंहका कई वर्षों तक खर्च चलाता रहा। मरनेपर इसके बेटे जीवाशाहको महाराणा अमरसिंहने प्रधान पद दिया था। यह भी खैरख्वाह आदमी था। लेकिन भामाशाहकी मानिंद होना कठिन था।

बड़ा आत्म-त्याग किया था, वह मेवाड़ पुनः अपनी स्वाधीनता प्रायः खो बैठा है। परन्तु फिर भी वहाँ तुम्हारा गुण गान होता रहता है। तुमने अपनी अक्षयकीर्त्तिसे स्वयं को ही नहीं किन्तु समस्त जैन-जातिका मस्तक ऊँचा कर दिया है। निःसन्देह वह दिन धन्य होगा, जिस दिन भारतवर्षकी स्वतन्त्रताके लिये जैन-समाजके धन-कुबेरोंमें भामाशाह-जैसे महानुभावोंका उदय होगा।

× × × ×

जिस नररत्नका ऊपर उल्लेख किया गया है, उसके चरित्र, दान आदिके सम्बन्धमें ऐतिहासिकोंकी चिरकालसे यही धारणा रही है। किन्तु हालमें रायबहादुर महामहोपाध्याय प० गौरीशंकर हीराचंदजी ओझाने अपने राजपूतानेके इतिहास तीसरे खण्डमें 'महाराणा प्रतापकी सम्पत्ति' शीर्षकके नीचे महाराणाके निराश होकर मेवाड़ छोड़ने और भामाशाहके रुपये दे देनेपर फिर लड़ाईके लिये तैयारी करनेकी प्रसिद्ध घटनाको असत्य ठहराया है।

इस विषयमें आपकी युक्तिका सार 'त्यागभूमि' के शब्दोंमें इस प्रकार है—

"महाराणा कुम्भा और साँगा आदि द्वारा उपार्जित अतुल सम्पत्ति अभी तक मौजूद थी, बादशाह अकबर इसे अभी तक न ले पाया था। यदि यह सम्पत्ति न होती तो जहाँगीरसे सन्धि होनेके बाद महाराणा अमरसिंह उसे इतने अमूल्य रत्न कैसे देता? आगे आनेवाले महाराणा जगतसिंह तथा राजसिंह अनेक महादान किस तरह देते और राजसमुद्रादि अनेक बहुत-व्ययसाध्य कार्य किस तरह सम्पन्न होते? इसलिये उस समय भामाशाहने अपनी तरफसे न देकर भिन्न-भिन्न सुरक्षित राजकोषों-से रुपया लाकर दिया।

इसपर त्यागभूमि के विद्वान समालोचक श्रीहसजीने लिखा है—

बड़ा आत्म-त्याग किया था, वह मेवाड़ पुनः अपनी स्वाधीनता प्रायः खो बैठा है। परन्तु फिर भी वहाँ तुम्हारा गुण-गान होता रहता है। तुमने अपनी अक्षयकीर्तिसे स्वयं को ही नहीं किन्तु समस्त जैन-जातिका मस्तक ऊँचा कर दिया है। निःसन्देह वह दिन धन्य होगा, जिस दिन भारतवर्षकी स्वतन्त्रताके लिये जैन-समाजके धन-कुबेरोंमें भामाशाह-जैसे सद्भावोंका उदय होगा।

× × × ×

जिस नररत्नका ऊपर उल्लेख किया गया है, उसके चरित्र, दान आदिके सम्बन्धमें ऐतिहासिकोंकी चिरकालसे यही धारणा रही है। किन्तु हालमें रायबहादुर महामहोपाध्याय पं० गौरीशंकर हीराचन्दजी ओझाने अपने राजपूतानेके इतिहास तीसरे खण्डमें 'महाराणा प्रतापकी सम्पत्ति' शीर्षकके नीचे महाराणाके निराश होकर मेवाड़ छोड़ने और भामाशाहके रुपये दे देनेपर फिर लड़ाईके लिए तैयारी करनेकी प्रसिद्ध घटनाको असत्य ठहराया है।

इस विषयमें आपकी युक्तिका सार 'त्यागभूमि' के शब्दोंमें इस प्रकार है —

'महाराणा कुम्भा और साँगा आदि द्वारा उपार्जित अतुल सम्पत्ति अभी तक मौजूद थी, बादशाह अकबर इसे अभी तक न ले पाया था। यदि यह सम्पत्ति न होती तो जहाँगीरसे सन्धि होनेके बाद महाराणा अमरसिंह उसे इतने अमूल्य रत्न कैसे देता? आगे आनेवाले महाराणा जगतसिंह तथा राजसिंह अनेक महादान किस तरह देते और राजसमुद्रादि अनेक बहु-व्ययसाध्य कार्य किस तरह सम्पन्न होते? इसलिये उस समय भामाशाहने अपनी तरफसे न देकर भिन्न भिन्न सुरक्षित राजकोषों-से रुपया लाकर दिया।

[illegible] —

और इसलिये हल्दीघाटीके युद्धके बाद जब प्रतापके पास पैसा नहीं रहा, तब भामाशाहने देश-हितके लिए अपने पाससे—युद्धके उपार्जन किये हुए द्रव्यसे—भारी सहायता देकर प्रतापका यह अर्थ-कष्ट दूर किया है; यही ठीक जँचता है। रही अमरसिंह और जगतसिंह द्वारा होनेवाले खर्चोंकी बात, वे सब तो चित्तौड़ तथा उदयपुरके पुनः हस्तगत करनेके बाद ही हुए हैं और उनका उक्त गुप्त खजानोंकी सम्पत्तिसे होना सम्भव है, तब उनके आधारपर भामाशाहकी उस सामयिक विपुल सहायता तथा भारी स्वार्थ-त्यागपर कैसे आपत्ति की जा सकती है? अतः इस विषयमें ओझाजीका कथन कुछ अधिक युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता, और यही ठीक जँचता है कि भामाशाहके इस अपूर्व-त्यागकी बदौलत ही उस समय मेवाड़का उद्धार हुआ था और इसीलिये आज भी भामाशाह मेवाड़ोद्धारक-के नामसे प्रसिद्ध हैं।

[illegible] १९३३ में [illegible] राजपूतानेका [illegible] नामक [illegible]। इस पुस्तककी प्रस्तावना [illegible] भी [illegible] विरुद्ध [illegible] नहीं लिखा [illegible]।

—[illegible]

हियेकी आँखोंसे

इज़्ज़त बड़ी, या रुपया ?

वाक्य मेरे मुँहसे पूरा निकला भी न था कि लालाजीने मुझसे धीरेसे कहा–"देखो, हमारे बारेमें कोई कुछ सोचे या न सोचे, पर हमें दूसरेके मनमें क्या है, यह नहीं सोचना चाहिए। हमारे लिये सोचनेको और बहुत-सी बातें हैं। हमारे बारेमें कोई क्या सोचता है और क्या कहता है, इसकी फाइल हम क्यों बनायें। अपने जीवन-पथमें हमें बहुत-सी उपयोगी बातें सोचनी पड़ती हैं। फिर क्या न हम वही बातें सोचें जो हमें अपने लक्ष्य तक निष्कण्टक पहुँचा दें। हमें तनिक भी हल्का बना देनेवाले विचार अपने पास भी नहीं फटकने देने चाहिएँ, और तुमसे तो मैं ऐसी मनोवृत्तिकी कोई आशा नहीं रखता था।"

लालाजीने अपने मनकी बात जिन शब्दोंमें और जिस ढंगसे कही, वह तो अब याद नहीं, पर भाव यही थे। मेरे ऊपर घड़ों पानी पड़ गया। फिर उन्होंने उस ओसारेकी भी सुनी जाने लायक आवाज़में कहा—"देखो, बुरी बात पकड़ते देर नहीं लगती। प्रारम्भमें बदीका उद्गम अत्यन्त सूक्ष्म होता है, पर धीरे-धीरे वही महान रूप धारण कर लेता है। बड़का बीज भी सुनते हैं बहुत छोटा होता है पर समय पाकर वही विशाल बन जाता है। सांपका जरा सा विष मनुष्यके एक रोम-छिद्रमें प्रवेश होकर सारे शरीरमें फैल जाता है। इसी तरह पाप वासनाएँ, खोटी आदतें, कलुषित भावनाएँ प्रारम्भमें प्रायः कीड़ेकी तरह दृष्टि-अगोचर होती हैं। यह भेड़ बनकर आती हैं पर शरीरमें प्रवेश करते ही शेर रूप बना लेती हैं। व्यसनोंके वश [illegible] [illegible] व्यापार बढ़ता ही चला जाता है। पाप भी [illegible] व्याज है। [illegible] और आगकी चमकसे [illegible] बालक आकर्षित होता है वैसे ही प्रारम्भमें इसका सौन्दर्य रूप देखकर मनुष्य भुलावेमें आ जाता है। बहुत ही सतर्क और सावधानीसे रहा जाये तभी इनसे [illegible] दामनको बचाया जा सकता है। कुछ लोग ही [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हुआ जान सका—

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] न [illegible] और [illegible] बिगड़ गई हैं। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], जिसके कारण हमारे

जेलसे ब्रह्मचर्य्यका व्रत लेकर आओगे ? प्राणनाथ, मेरे मनकी अन्तिम साध पूरी करो.......।"

पत्र आगे न पढ़ा गया। जैसे कलेजेमें किसीने घूंसा मारा हो। अरे छिद्रान्वेषी पापी मन! इसी साध्वीके प्रति तुझमें मैल भरा था! प्रायश्चित्त स्वरूप सौ बार उसे मन ही मन प्रणाम किया।

होती। जरा मजाक किया और उन्होंने उसे व्यभिचार प्रमाणित किया। गरज यह है कि सोते-उठते, खाते-पीते उनके इस बेमौसमी उपदेश पीते-पीते हमारे पेट बढ़ गये, पर उन्हें रहम न आया। रात्रिको जरा सोने लेनेका अवकाश मिलता, जी चाहता कि नक्षत्रोंसे बातें करें कि आप बीचमें कूद पड़ते। वही अपनी राम-कहानी। फिजूल बैठे क्या करते हो, सन्ध्या क्यों नहीं कर लेते। सन्ध्या नहीं आती है, तो आओ भजन ही गावें। और लगते फिर पंचम स्वरमें अलापने।

यार लोग तो इस मौकेके लिए उधार खाये बैठे ही रहते थे। एक कहता—"बड़े भाईकी स्वर-लहरी तो देखिये, कहदो गिलहरी भी झेंप जाय।" दूसरा कहता—"अभी स्वरको क्या, इनके नाचको देखिये, मानो बुढ़िया नानी चरखी पीस रही हो।" कोई कहता—"अजी, तरन्नुम तो देखिए, वैशाखनन्दन भी तो वारे।" कोई कहता—"शायरी तो मुलाहिजा फर्माइए, तुलसी, सूर स्वर्गमें बैठे अपना सिर धुन रहे होंगे।"

यारोंके बढ़ावेमें उन्हें कुछ अजीब लुत्फ आता था। यही गायन फिर नृत्यमें परिवर्तित हो जाता। यह नाच भारतकी कौन-सी प्राचीन नृत्य-कलाका द्योतक है, यह तो हम नहीं जानते थे किन्तु हम इसे मेंढक-नृत्य कहते थे।

छ: माहके बाद उन्हें उस बैरागी होटलसे धक्के मिले, तो मुँह लटकाये हुए सीधे दिल्ली आये और यहाँ हवन-सामग्री और भजनोंकी किताबें फेरीमें बेचकर चैनकी बंसी बजाने लगे।

बिहारीलालके दस माह बाद हम भी दुत्कार दिये गये। अपना-सा मुँह लेकर हम भी दिल्ली चले आये। सिरपर झेंप सवार थी, कि कोई देख न ले किसीको खबर तक न की। अँधेरे-अँधेरेमें घर पहुँचे, पर न जाने कौन शैतान कानों-कान कह आया कि आवारा मालपर चीलकी तरह मजमा टूट पड़ा। इनमें अपने-पराये, सगे-सम्बन्धी, यार-दोस्त सभी थे। पहले प्रश्नोंकी बौछार हुई, फिर सहानुभूति प्रदर्शित की गई, फिर तारीफों-

भाई-भाई

मोण्टगुमरी जेलमें हमारी बैरिकपर एक पीली वर्दीवाला मुसलमान नम्बरदार तैनात था। वह पाँचो वक्त नमाज पढ़ता और बाकी टाइम-में कुरान। शक्लोसूरतसे भलमनसाहत टपकती थी और सचमुच था भी वह ऐसा ही। उम्र लगभग ५०-५५ की होगी। २० सालकी सज़ा पूरी करनेमें ५-६ माह बाक़ी रहे थे। उसे देखकर कभी ख़याल आता कि न जाने किस भलेमानसने इस ईसामसीहकी भेड़को दूसरेके भुलावेमें कैद किया है? इस बछियाके ताऊसे क्या गुनाह बना होगा? और कभी ख़याल आता अजी, ऐसे ही भोली-भाली शक्लवाले कहर ढाते हैं। इन जैसोंका वह आलम है कि 'हो जाएँ ख़ून लाखों, लेकिन लहू न निकले', कुछ न कुछ हरकत की होगी तभी तो हज़रत धर लिये गये, वर्ना किसका सिर फिरा है जो नमाज़ अदा करने और कुरान पढ़ने हुए इन्हें पकड़ता? एक बार उससे पूछा भी तो हँसकर टाल दिया बताया नहीं।

उसी जेलमें उन दिनों उसका छोटा भाई भी कैद था। अनेक जेलोंमें पृथक्-पृथक् रहने हुए सौभाग्यसे वे दोनो वहाँ मिल गये थे। दोनो एक दूसरेसे बहुत फासलेपर रहते थे, पर कभी-कभी मिलन हो जाता था। छोटे भाईसे पूछा तो वह बोला— मेरी नालायकीसे यह सज़ा भुगत रहा है। मैंने एक आदमीको कत्ल कर दिया था, जब पुलिस मेरी तलाशमें आई तो इसने खुद कुसूर तस्लीम कर लिया। भाईको फँसते देख मैंने अपना गुनाह कुबूल कर लिया। पुलिसने मुझे भी थाम लिया। मगर यह न माना और अदालतमें भी अपनेको ही मुजरिम साबित करनेकी कोशिश की। मैं अपनेको कातिल कहता था और यह अपनेको। आखिर अदालतसे हम दोनोंको २०-२० सालकी सज़ा हुई।"

मैंने पूछा 'तुम दोनोंने अपराध क्यों स्वीकार किया? एकने मंजूर

हाँ यह भी कहा कि मकान मालिकने (जो अपनी जातिके ही थे) तेरे जाते ही किराया बढ़ा दिया था।

मकान-मालिककी बात अनसुनी-सी करके सुन्दर हलालखोरीके इस त्यागकी बात कई बार सुनी। सोचा, मेरे पास क्या है, जो उसे इस मेहरबानीकी एवजमें दे सकूँ।

जो बन सका वह दिया, तो माथेपर तीन बार चढ़ाया जमीनको चुमकारा। दामन फैलाकर दुआएँ दीं और कहा—"मुबारिक आजका दिन, जो अपने जुम्माके हाथमें मुझे यह लेहना नसीब हुआ।"

मेरा ब्याह हुआ तो मैंने तीहल दी। तीहल लेकर फूली न समाई। पहनकर सारे मुहल्लेको दिखाई—"मेरे जुम्माकी ससुरालसे यह तीहल मेरे वास्ते आई है।"

जिस मकानमें वह कमाने आती थी वह मैंने बदल लिया है फिर भी जब कभी मिल जाती है तो देखकर हरी हो जाती है। मैं सोचता हूँ इन अछूतोंमें भी इतना त्याग, इतना स्नेह, इतना प्रेम [illegible] कहीं हम उच्च कहलानेवालोंके गुण तो इन्होंने नहीं छीन लिए

हियेकी आँख कब खुलती है

जून १९५० के 'निगार' में "जहाँगीर एक शिकारीकी हैसियतसे" एक लेख प्रकाशित हुआ है, जिसमें जहाँगीर बादशाहकी डायरी में शिकार सम्बन्धी विवरण उद्धृत किये गये हैं। उस डायरीके दो अंश यहाँ दिये जा रहे हैं। बादशाह जहाँगीर लिखता है—

"एक बार मेरे जहनमें यह बात आई कि मुझसे इस वक्ततक जितने जानवर मैंने शिकार किये हैं, उनकी फेहरिस्त बनाई जाय। चुनाँचे मैंने अखबारनवीसोंको हुक्म दिया और उन्होंने जो फेहरिस्त बनाई उससे मालूम हुआ कि बारह सालकी उम्रसे आजतक २८५३२ गिर शिकार किये हुए जानवरोंके मेरे सामने पेश किये गये।"

आगे इन मारे हुए जानवरोंके नामोंकी तालिका दी हुई है, जिसके उद्धरणकी हम आवश्यकता नहीं समझते। अन्तिम आयुमें जहाँगीरने शिकार न खेलनेकी प्रतिज्ञा कर ली थी। वह प्रतिज्ञा क्यों की गई, इस वाक्येका बयान वह इस प्रकार करता है—

मेरे बेटे शाहजहाँका महबूब (अत्यन्त चहेता, प्यारा) बेटा 'शुजा' जिसने नूरजहाँ बेगमकी आगोशमें परवरिश पाई थी, और जो मुझे जानसे ज्यादा अजीज (प्रिय) था बीमार हुआ। बहुत इलाज हुआ, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ तो मैंने बारगाह रब्बुलअजत(दयालु ईश्वरके दरबार) में दुआ (प्रार्थना) की। उस वक्त मुझे खयाल आया कि सत्रह साल कब्ल मैंने मुदाम अहद (वायदा) किया था कि जब मेरी उम्र ५० से मुतजाविज हो जायगी तो मैं शिकार छोड़ दूँगा और मैं किसीकी जान न लूँगा। और सोचा कि मुमकिन है इस अहदके पूरा करनेसे शुजा अच्छा हो जाय। चुनाँचे मैंने इसपर अमल किया और शुजा अच्छा हो गया।"

जहाँगीरकी उक्त डायरी पढ़ते हुए मुझे अपने जीवनकी कई घटनाएँ स्मरण हो आईं। और जब पत्थरके सामनेसे गुजरता है तभी उसे अपनी

मेरे कारण किसीको कष्ट पहुँचे। यह रकम मैं अपने पाससे सरकारी खजाने में भर दूँगा। यह रुपये मेरे भाग्यके होते तो जाते ही क्यों?" बहुत जोर देनेपर भी मियाँ ऊधमसिंह पुलिसकी मार्फत अपराधीकी खोज करानेके लिए सहमत न हुए। केवल इसलिए २०० रु० का घुपचाप घाटा उठा लिया कि किसी निरपराध मनुष्यपर उनके कारण कहीं कुछ अत्याचार न हो जाय।

पंचायती सत्कार

दिल्लीके पहाड़ी धीरज बाज़ारमें एक कहार चाट बेचा करता था।

एक रोज़ ४-५ बरसकी आयुका एक लड़का अपने घरसे दो गिन्नियाँ पैसे समझकर उठा लाया। एक गिन्नी किसी फेरीवालेको देकर उससे चने लिये और दूसरी गिन्नीकी इस कहारके यहाँसे चाट ली। चाटवाला उस वक्त घर गया हुआ था। उसके ७-८ बरसके लड़केने भी उसे पैसा ही समझा। जब चाटवाला आया तो लड़का बोला—"बाबा, यह नया पैसा तो हम लेंगे।"

चाटवाला गिन्नी देखकर घबराया, उसने पासके दुकानदारको बुलाकर लड़केसे सब माजरा सुना और गिन्नी उस दुकानदारके पास अमानतन रख दी ताकि वास्तविक मालिकके पास वह पहुँचा दी जाय। और गिन्नी यथास्थान भेज दी गई। मुझे जब इस घटनाका पता चला तो मैं उस गरीब चाटवालेकी इस ईमानदारीसे बहुत प्रभावित हुआ और मैंने यह विवरण पत्रोंमें प्रकाशित करा दिया।

पत्रोंमें छपनेके दो-तीन रोज़ बाद वह चाटवाला मेरे पास आया और कृतज्ञता-भरे स्वरमें बोला—"एक गिन्नीसे हुजूर क्या फ़र्क़ पड़ता। आपने जो मुझे इज़्ज़त दिलाई है उसके आगे करोड़ोंकी दौलत हेच है। अखबारोंमें यह खबर छपनेपर हमारी बिरादरीकी पंचायत हुई, जिसमें मुझे बुलाकर शाबाशी दी गई और कहा गया कि तूने अपनी जातकी इज़्ज़त बढ़ाई है। हुजूर आपकी बदौलत मेरी इतनी इज़्ज़त हुई, आपका किस मुँहसे उपकार मानूँ।

मैंने कहा—'इतने गरीब होते हुए भी जो तुमने आदर्श उपस्थित किया है, उस समाचारको प्रकाशित करना एक लेखकके नाते मेरा फ़र्ज़ था। तुम्हारी ईमानदारी इससे भी ज़्यादा इज़्ज़त पानेकी मुस्तहक़ है।'

में कुत्ते न भौंकें वहाँ इन्हें देख लीजिये। सुबह-शाम हुजरतके हाथमें ऐरे-गैरे नत्थूखैरोंके लिए दवाओंकी शीशियाँ रहती हैं, खुदके पाँवमें साबुत जूतियाँ नहीं और उस रोज़ दुकान बेचकर उस.... नादिहन्दको दो हजार रुपये दे दिये, जिसमें पठान भी तोबा माँग चुके हैं। उस रोज़ स्कूलमें आते हुए यारोंने उन्हें बनानेके खयालसे कहा—

"बड़े भाई, आज तो ईखका रस पिलवाओ।" थोड़ी देरमें क्या देखते हैं कि हम ८-१० साथियोंके लिये ईखके रसके बजाय सन्तरेके रसके गिलास आ रहे हैं। हमने खिलाफ़ तवक़्क़ह देखकर पूछा—"बड़े भाई, यह क्या तकल्लुफ़?" फ़र्माया—"आप लोग बड़ बार-बार पिलानेको कहते हैं।"

"रस पी चुकनेपर हम सबकी मुत्तफ़िक़ राय थी कि विमल भाई खब्ती होनेके साथ-साथ बुद्धू भी हैं"।

लड़केने अपनी बात कुछ इस ढंगसे कही कि मेरे वे साहित्यिक मित्र तपाकसे बोले—हाँ यार, इनके सब्रका एक ताज़ा नमीज़ा तो सुनो—"पुकार फ़िल्ममें किस क़दर रश है, यह तो तुम्हें मालूम ही है। विमल भाईने भी भीड़में घुसकर ४-५ फर्स्ट क्लास टिकट खरीद लिये। एक तो अपने लिए बाक़ीके परिचित या मुहल्लेके लोगोंके लिए, इस खयालसे कि कोई आये तो परेशान न हो। दर्शकोंकी भीड़ हालमें घुसी आ रही है और विमल हैं कि आनेवाले परिचितोंकी प्रतीक्षामें बाहर घूम रहे हैं और जब राम-राम करके टिकटोंसे मुक्ति पाई तो हालमें निज रखनेको जगह न थी। टिकट जिन साहबने लिये, उनमेंसे किसीने भी साम समझकर और किसीने बुरा न मान जाएँ, इस भयसे टिकटके दाम नहीं दिये। एक साहबने दाम देनेकी ज़हमत फ़र्माते हुए अठन्नी उनके हाथपर रखी और बोले—"जब हाउस फुल हो गया तो टिकटके पूरे दाम कैसे?"

यह नमीज़ा उन्होंने इस अन्दाज़में बयान किया कि हम लोट-पोट

हो गये। रातको सोने लगा तो मुझे विमल भाईकी ऐसी कई बातें स्मरण हो आईं, जिन्हें मैं अब तक उनकी खूबियाँ तसव्वुर किया करता था। अब जो दुनियाकी ऐनक लगाकर देखता हूँ तो रंग ही दूसरा नज़र आने लगा।

सन् १९३३ की बात है। मुझे ऐतिहासिक अनुसन्धानके लिए अकस्मात् उदयपुर जाना उसी रोज आवश्यक हो गया। मार्गव्ययके लिए तो रुपये उधार मिल गये, और ठहरने आदिकी सुविधा इतिहास-प्रेमी बलवन्तसिंहजी मेहताके यहाँ हो गई; परन्तु पहननेके कपड़े मेरे पास कतई नहीं थे। जेलसे आकर बैठा था। जो कपड़े थे, उनमेंसे कुछ धोबीके यहाँ थे, कुछ मैले पड़े थे। स्वच्छ एक भी न था, और उदयपुर जाना उसी रोज अत्यन्त आवश्यक था। बड़ी असमञ्जस और चिन्तामें था कि यकायक विमल भाई आये और बोले कि— 'सुना है आप उदयपुर जा रहे हैं, वहाँ आपको कई रोज़ [illegible] परन्तु कपड़े तो नहीं हैं, परन्तु आप घरपर दिनभर [illegible] हैं [illegible] मजबूरन विमल भाईको कपड़े देने पड़े। [illegible] कि धोबी भी देखकर शर्माये।

गत वर्ष गर्मीके दिनोंमें [illegible] 'हिन्दुस्तान' [illegible] आप आराम फ़र्मा रहे थे [illegible] दर्शन [illegible] ने गये। लगे हाथ झाड़ू भी [illegible] पोंछकर जानेके अतिरिक्त आपको झाड़ू देनेके [illegible] समाचार सुना तो घबड़ाया हुआ विमल भाईके [illegible] समझमें नहीं आता था कि इस महँगी और कण्ट्रोलके जमानेमें अब [illegible] और हवा-पानीके [illegible] देंगे। सान्त्वना देनेके लिए न कोई शब्द सूझते थे न कोई उपयुक्त शेर ही याद आता था। इसी उधेड़बुनमें मुँह लटकाये पहुँचा तो विमल भाई देखते ही खिल उठे, और मैं कुछ कहूँ, इससे पहले स्वयं ही बोले—

भिक्षुक मनोवृत्ति

बहुधा लोगोंके जीवनमें ऐसे अवसर आते हैं कि दिनभर भूखे-प्यासे रहनेसे पेट अँतड़ियोंसे लग गया है, जीभ तालूसे जा लगी है, ओठोंपर पपड़ियाँ जम गई हैं और चलते-चलते पाँव मूसल हो गये हैं। न पासमें एक धेला है, जो चने चबाकर ही ठण्डा पानी पिया जाय, न मंज़िले मक़सूद ही नज़र आती है। पासमें पैसे न होनेकी वजह मुफ़लिसी ही नहीं होती, आकस्मिक घटनाएँ भी होती हैं। कभी जेब कट जाती है, कभी घरसे लेकर न चले और साथियोंने रास्तेमें ही पकड़ लिया और समझा कि अभी वापिस आये जाते हैं, मगर रास्तेमें कार फेल हो गई या ताँगा पलट गया, पैदल चलनेके सिवा कोई चारा नहीं। कभी रेलवे टिकिटके लिए १-२ पैसेकी कमी रह गई है। परदेशमें किससे माँगें कोई जान-पहचानका भी तो दिखाई नहीं देता कि इस मुसीबतसे निजात मिले। और दिखाई दिया भी तो माँगनेकी हिम्मत न हुई, [illegible] रह गए। घरमें बच्चा बीमार पड़ा है [illegible] मिलनेवाली है मगर घरमें [illegible] लिए [illegible] आफ़िस जानेके लिए [illegible] है। और मनमें [illegible] कि चला [illegible] मालूम [illegible] है। कुम्भ-स्नानको [illegible] पैसा [illegible] आये [illegible] मदद करना [illegible] न मिले तो [illegible] जान बचाना [illegible]

हमारी हैरानीकी हद न रही, हमने कहा—"अरे भई ! जब तुम्हारे पास गल्ला भरा पड़ा है, तब तुम नाहक हमसे क्यों लेना चाहते हो ?"

वे बोले—"वाह साहब, आप जब इतनी दूर चलकर देने आये हैं, तब हम क्यों न लें, आप भी अपने मनमें क्या कहेंगे कि ब्राह्मण होकर दान लेनेसे इन्कार किया।" हमने अपनी हँसी और आवेशको रोककर कहा—"भई, हम इस वक्त खैरात करने नहीं आये, अपने भाइयोंकी मदद करने आये हैं। मुसीबतमें इन्सान ही इन्सानके काम आता है। हम दे रहे हैं, इसीसे दाता नहीं, और जो जरूरतमन्द ले रहे हैं, वह माँगते नहीं। यह तो सब मिलकर मुसीबतमें एक दूसरेका हाथ बटा रहे हैं। इसीलिए गाँवमें जो सचमुच इमदादके योग्य हो उसे बुला दो, जो हमसे उसकी सहायता बन सकेगी करेंगे।"

गाँववालोंने जिस बुढ़ियाका नाम बताया, उसने मिन्नतें करनेपर भी कुछ नहीं लिया। तब वे गाँववाले स्वयं ही बोले—"आप नाहक परेशान होते हैं। इमदाद लेगा तो सारा गाँव लेगा, वर्ना कोई न लेगा। अगर आप हमें न देकर, सिर्फ १-२ को देकर चले जाएँगे, तो सारा गाँव इन्हें हलका समझेगा, ताना मारेगा, इसी डरसे ये लोग नहीं लेते हैं और न लेंगे।"

बड़ा जी भारी हुआ, जिन्हें सचमुच सहायताकी जरूरत थी, उन्हें भी सहायता न दी जा सकी। लाचार कारमें बैठकर नहरकी पटरी-पटरी दिल्लीकी ओर वापिस आ रहे थे कि नहरके किनारे कुछ लोग औरतों-बच्चों समेत दिखाई दिये तो कार रुकवा ली। पूछनेपर मालूम हुआ कि गाँवमें पानी आ जानेसे घर छोड़ यहाँ आ गये हैं और ज्यादातर किसान जाट हैं।

हमने जब इमदाद देनेकी बात उठाई तो वे लोग बातको टाल गये, दुबारा कहा तो ऐसे चुप हो गये जैसे कुछ सुना ही नहीं। फिर तनिक

पतिव्रता चिड़िया

ग्यारह मार्च १६३० की प्रातःकालका सुहावना समय था, हम सब सी क्लासके राजनैतिक क़ैदी मौण्टगुमरी जेलमें बैठे हुए बात कर रहे थे। अनुमानतः ८ बजे होंगे कि एक चिड़ियासे एक चिड़ा अकस्मात् लड़ता हुआ देखा गया। चिड़ा उससे बलात्कार करना चाहता था, किन्तु चिड़िया जानपर खेलकर अपनेको बचा रही थी। सफलमनोरथ न होनेके कारण क्रोधावेशमें चिड़ाने चिड़ियाकी गर्दन झकझोर डाली, जिससे उसके प्राणपखेरू उड़ गये। मरनेपर चिड़िया ऊँची दीवारसे ज़मीनपर आ पड़ी। हम सब कौतूहलवश अपना काम छोड़कर उसके चारों ओर खड़े हो गये। एक-दो मिनटमें ही एक और चिड़ा वहाँ आया और हमारे पाँवोंमें पड़ी चिड़ियाको बड़ी आतुरता और बेक़रारीके साथ सूँघने लगा। वह हटानेसे भी नहीं हटता था। उसकी वह तड़प कठोरहृदयोंको भी तड़पा देनेवाली थी। मालूम होता था कि यह चिड़ा ही उस चिड़ियाका वास्तविक पति था। वह इतना शोकाकुल था कि उसे हमारा तनिक भी भय नहीं था। हम इस कौतुक या आदर्श प्रेमको देख ही रहे थे कि [illegible] और [illegible] भी वहाँ [illegible] न आये। उन्होंने मना किया उनसे तब भी मज़ाक न [illegible]। मरी हुई चिड़ियाको देख-देखकर चिड़ा कहीं [illegible] उस स्थानसे चिड़ियाको उठाकर उसकी नज़रसे अलग कर [illegible]। [illegible] वह चिड़ा [illegible] बैरकोंमें इधर-उधर घूमने लगा। [illegible] चिड़ियाके दो झाड़ झाड़ पर वहीं गिर पड़े थे [illegible] स्मारकस्वरूप उन परोंको ही उठाकर उस [illegible] सुखमय दाम्पत्य-जीवन व्यतीत करते थे। जिस तरह वह चिड़ा [illegible] हमारे पाँवोंमें घूम रहा था, ठीक इसके विपरीत [illegible] दीवारपर बैठा हुआ भयभीत हुआ-सा हमारी ओर देख रहा था। मरी हुई चिड़ियाके पास आनेकी

आकस्मिक प्रेरणा

सन् १९२५-२६ ईस्वीकी बात होगी। जाड़ेके दिन थे। मेरे एक मित्र देहलीमें ही रहते थे। उनके यहाँ कुछ मेहमान आये हुए थे। उन सबकी इच्छा थी कि मैं भी रातको उन्हींके पास रहूँ। अतः घरपर मैं अपनी माँसे रातको न आनेके लिए कहकर चला गया और मित्रके यहाँ जागरणमें सम्मिलित हो गया, परन्तु रात्रिको दस बजेके करीब घर आनेके लिए एकाएक मन व्याकुल होने लगा। मित्रके यहाँ मुझे काफी रोका गया और इस तरह मेरा अकस्मात् चल देना उन्हें बहुत बुरा लगने लगा। मैं भी इस तरह एकाएक जानेका कोई कारण न बता सकनेकी वजहसे अत्यन्त लज्जित हो रहा था, किन्तु उनके बार-बार रोकनेपर भी मुझे वहाँ एक मिनट भी रहना दूभर हो गया और मैं ज़िद करके चला ही आया। घर आकर माँको दरवाजा खोलनेको आवाज दी। दरवाजा खुलनेपर देखता हूँ कि कमरेमें धुआँ भरा हुआ है और माँके बिस्तरमें आग सुलग रही है। दौड़कर जैसे-तैसे आग बुझाई। पूछनेपर मालूम हुआ कि थोड़ी देर पहले लालटेन जलानेको माचिस जलाई थी, वही बिस्तरेपर गिर गई और धीरे-धीरे सुलगती रही। यदि दो-चार मिनटका विलम्ब और हो जाता तो माँ जलकर भस्म हो जाती। साथ ही मकानमें ऊपर तथा बराबरमें रहनेवालोंकी क्या अवस्था होती, कितनी जन-हत्या होती, कितना धन नष्ट होता, यह सब सोचते ही कलेजा धक-धक करने लगा। उस समय किस आन्तरिक शक्तिने मुझे घर आनेके लिए प्रेरित किया? यह मेरे किसी पूर्वसंचित पुण्यका उदय ही समझना चाहिए।

इसी तरहकी आन्तरिक प्रेरणा किसी निकट सम्बन्धीके बीमार पड़नेपर बिना किसी सूचनाके मुझे सुदूरसे कितनी ही बार खींच लाई है।

-

सन् १९५१ में हमारे नये प्रकाशन

१. मेरे बापू

श्री हुकुमचन्द्र 'बुखारिया'

डॉ० रामकुमार वर्मा—

'मेरे बापू' में युगपुरुषको कविकी श्रद्धाञ्जलि समर्पित हुई है। इस श्रद्धाञ्जलिमें कविकी अनुभूति और कल्पनाके ऐसे प्रसून हैं जिनकी सुगन्धि निरन्तर पूजाकी पवित्रता लिए रहेगी। बापूका व्यक्तित्व ही काव्यका सहज विषय है। कवित्वके इस जागरणमें कविकी लेखनी संदेश-वाहिका बन गई है। ये संदेश शताब्दियों तक गूँजते रहेंगे। मैं कविके कंठमें अपना स्वर मिलाकर कह सकता हूँ:—

'एक बार धरती गूँजेगी हाँ फिर उसके अमर स्वास से'

मूल्य ढाई रुपए

२. पंच-प्रदीप

श्री शान्ति एम० ए०

प्रमुख लेखक सुमित्रानन्दन पन्त लिखते हैं:—शांतिजीका कवि-हृदय संस्कारतः एक स्वच्छ सुथरे कक्षके भीतर प्रतिष्ठित है, जहाँसे उनका सहज बोध भावनाके उत्थान-पतनों, सुख-दुःखके मधुर-तिक्त संवेदनों तथा बाह्य जगत्‌के आघातों और विरोधोंको एक स्वस्थ सयमन तथा आगे बढ़ने को प्रेरणा प्रदान करता रहता है। कहीं भी कवयित्रीकी समर्थ भावना ऊबड़-खाबड़ धरतीकी ठोकर खाकर परास्त होती नहीं प्रतीत होती, और न वह भावोच्छ्वास मात्र बनकर वाष्पकी तरह हवामें उड़ती दिखाई देती है।

कवयित्रीकी भाषामें स्वाभाविकता, सजीवता, मधुर प्रवाह तथा शक्तिका सन्तुलित सौष्ठव है। वह अपने काव्य-निर्माणमें रचन तथा महादेवी जीकी भंकारोंको आत्मसात् कर उन्हें नवीन रूप प्रदान कर देती है।

मुझे विश्वास है 'पंच-प्रदीप' की शिखा भी उत्तरोत्तर उन्नत होकर उस गौरव को वहन करनेमें समर्थ होगी।"

मूल्य दो रु०

९. मिलनयामिनी

[श्री बच्चनजी की नवीनतम कृति]

ऑल इण्डिया रेडियो—

"मिलनयामिनी रस रागिनी है। यह हमारे मनके तारोंको मायाकी उँगलियोंसे बजाती है और जीवनके एकान्त क्षणोंकी उदासी दूर कर जाती है।"

मूल्य चार रु०

१०. वैदिक साहित्य

आमुख लेखक

माननीय सम्पूर्णानन्दजी, शिक्षामंत्री उत्तर प्रदेश राज्य

इसके लेखक वैदिक साहित्यके प्रकाण्ड विद्वान् और परम्परागत धर्मशास्त्र, पुराण और भारतीय दर्शनोंके प्रसिद्ध अध्येता श्री पण्डित रामगोविंद त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री हैं।

वैदिक साहित्यका इतना सरल सांगोपांग परिचय हिन्दी तो क्या सम्भवतः भारतकी अन्य भाषाओंमें भी उपलब्ध नहीं है। पुस्तकके लगभग ५०० पृष्ठोंमें अबतक प्राप्त ११ संहिताओं, १८ ब्राह्मण ग्रंथों, ६ आरण्यकों और २२० उपनिषदोंका मूल [illegible] और [illegible] अन्य ज्ञातव्य बातोंका भी [illegible] है।

मूल्य छः रु०

११. जैन शासन (द्वितीय संस्करण)

पं० सुमेरुचन्द्रजी दिवाकर, न्यायतीर्थ

आचार्य विनोबा भावे —

"[illegible] जैन शासन [illegible] सुलभ [illegible] है [illegible] प्राचीन [illegible] है क्योंकि "अ[illegible] [illegible] माना जाता है।"

मैथिलीशरण गुप्त —

"[illegible] और [illegible] अच्छी [illegible] है।"

मूल्य तीन रु०

१९५० म प्रकाशन

१४. केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणि

सम्पादक—नेमिचन्द्र जैन, ज्योतिषाचार्य

प्रश्नशास्त्रका अद्भुत ग्रन्थ, हिन्दी विवेचन, मुहूर्त, कुण्डली, शकु आदिके हिन्दी परिशिष्टोंसे विभूषित।

प्रस्तुत ग्रन्थमें भारतके सभी चन्द्रोन्मीलन, केरल, प्रश्नकुतूहल आदि प्रश्नशास्त्रोंके तुलनात्मक विवेचनके साथ ही साथ ४० पृष्ठोंकी भूमिका जैन ज्योतिषकी विशेषता समझाई गई है। सामान्य पाठक भी इस द्वारा अपने भावी इष्टानिष्टका परिज्ञान कर सकता है।

मूल्य चार रुपये

१५. नाममाला [संस्कृत]

सम्पादक—पं० शम्भुनाथ त्रिपाठी, सप्ततीर्थ

महाकवि धनञ्जय कृत नाममाला और अनेकार्थनाममालाका अमर कीर्तिकृत भाष्यसहित सुन्दर सम्पादन। साथमें अनेकार्थनिघण्टु तथा एकाक्षरी कोश भी सम्मिलित हैं।

प्रत्येक शब्दकी सप्रमाण व्युत्पत्ति देखिए।

मूल्य साढ़े तीन रुपए

१६. सभाष्यरत्नमञ्जूषा [संस्कृत]

सूत्रशैलीमें लिखा गया एकमात्र जैन छन्दशास्त्रका ग्रंथ।

सम्पादक—छन्दशास्त्रके मर्मज्ञ, प्रो० एच० डी० वेलणकर, बम्बई।

मूल्य दो रुपये

सायलीरजात्र नवानतम कृति मुद्रित हो रही

२८. शेर-ओ-सुख़न

प्रारंभसे ई० सन् १६०० तककी उर्दू शायरीका प्रामाणिक
निष्पक्ष आलोचना और इस अवधिके प्रायः सभी शा
श्रेष्ठतम रचनाओंका संकलन और परिचय

संक्षिप्त विषय सूची:—

अवतरण—

१—मुस्लिम शासनसे पूर्व भारतकी राष्ट्रभाषा अपभ्रंश थी
भ्रंशका महान कवि स्वयंभू। ३—तुलसी, सूरके प्रथम प्रेरक
थे। ४—अपभ्रंशसे पूर्व प्रचलित भाषाएँ। ५—नागरी
मूलस्रोत अपभ्रंश है। ६—हिन्दीशब्दके आविष्कारक और
कवि ख़ुसरो। ७—हिन्दी उर्दू दो भिन्न धाराएँ। ८—उर्दू
अधिकताके कारण। ९—फ़ारसीकी नक़लके कारण उर्दू
१०—उर्दूमें संस्कृतका असफल अनुकरण। ११—उर्दू फ़ारसी
१२—उर्दू-शायरीमें समयकी आवश्यकतानुसार भाव
१३—उर्दू शायरीकी ख़ूबियाँ। १४—उर्दूकी पाचनशक्ति।
कविताके गुण दोष। १६—उर्दू-शायरीकी जन्मभूमि दक्खिन। १
शायरी क्या है? १८—उर्दू-शायरीका जन्म।

प्रारंभिक युग—

१—दक्खिनी शायर। २—उर्दूके आदि शायर। ३—देहल

मध्यवर्ती युग—

१—मध्यवर्ती युगपर सिंहावलोकन। २—इस युगके
शायरोंका परिचय और चुने हुए शेर।

अर्वाचीन युग—

१—सिंहावलोकन (ग़ज़ल, शायरोंपर वातावरण और
प्रभाव, देहली और लखनवी शायरीमें अन्तर, शायरोंकी तुलना,
युगके १०० शायरोंका परिचय और चुने हुए शेर। पृष्ठ लग